नवरात्रि अनुष्ठान पर्व-ऐतिहासिकता एवं उपयोगिता

ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार



एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म परमपिता परमात्मा की विचित्रता से युक्त, अद्भुत और विलक्षण सृष्टि का उद्घाटन पूज्यपाद गुरुदेव श्रृङ्गी ऋषि कृष्णदत्त जी महाराज के प्रवचनों से हुआ। वह ईश्वर का एक अलौकिक और दिव्य प्रकटीकरण है और सृष्टि के इतिहास की एक मात्र, विलक्षण अद्भुत घटना भी। जब १४ सितम्बर सन् १९४२ को, उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर, सलेमाबाद में एक विशेष बालक ने जन्म लिया। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, शवासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो बालक की गर्दन दायें-बायें हिलने लगती, लगभग १५ मिनट वेद मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त सृष्टि के आदि काल से वर्तमान काल तक के विभिन्न कालों के स्वयं और विभिन्न ऋषि-मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक एक दिव्य प्रवचन होता। बाल्यावस्था होने के कारण, प्रारम्भ में आवाज अस्पष्ट होती और जैसे-जैसे आयु बढ़ने लगी, वैसे-वैसे ही आवाज और विषय दोनों स्पष्ट होने लगे। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नही था। ग्रामीण, निर्धन और अपठित समाज होने के कारण भूत प्रेत का प्रभाव मानते हुए बहुत-सी चिकित्सा भी कराई गई, पर सब व्यर्थ रहे। क्योंकि बालक की यह प्रवचन क्रिया तो यौगिक थी यह तो सतत् ऐसे ही चलती रही। आवाज जब कुछ स्पष्ट हुई तो इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में श्रृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। और इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में भी जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में जाता तो कुछ अन्तराल बाद स्वतः ही योग समाधि की स्थिति बन जाती। जहां इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और जैसा काल देखा था उस काल के अनुकूल व्याख्यान कण्ठ आ जाते। क्योंकि, जन्म जन्मान्तरों के संस्कार स्मृति में, अन्तःकरण में विराजमान रहते हैं। और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीर धारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती, जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि महाराज, और पूज्य महानन्द जी के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण, वहां अन्तरिक्ष में दिव्य आत्माओं के सम्मुख सत्संग में दिया जाने वाला दिव्य प्रवचन, इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन मानस को भी सुनाई देते। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, ब्रह्माण्ड की विशालता, प्रत्येक लोक में जीवन की अनिवार्यता का बोध, सृष्टि का उद्देश्य, पूर्व कालों में विज्ञान की विशालता का दिग्दर्शन, वैदिक संस्कृति का उज्ज्वलतम स्वरूप, आत्मा, परमात्मा और प्रकृति का स्वरूप, विभिन्न कालों का आँखो देखा सदृश्य वर्णन, भगवान राम और भगवान कृष्ण के जीवन की दिव्यता का साक्षात दर्शन, समाज में प्रचलित रूढ़ियों का निवारण करने वाली दृष्टि, क्या कुछ दिव्य नहीं है इन दिव्य प्रवचनों में ? ये किसी भी मनुष्य को, समाज का और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते है।

पूज्यपाद गुरुदेव की २० वर्ष की अवस्था तक ये प्रवचन ऐसे ही जनमानस को आश्चर्यचकित और उनका मार्गदर्शन करते रहे। परन्तु कुछ प्रबुद्ध महानुभावों ने इन प्रवचनों की इस अमूल्य निधि को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से सन् १९६२ से शब्द ध्वनांकित यन्त्र (टेप रिकार्ड) संरक्षित करने का निश्चय किया, और यह क्रम पूज्यपाद गुरुदेव के महाप्रयाण १५ अक्टूबर सन् १९९२ तक होता रहा।

इस अन्तराल पूज्यपाद गुरुदेव के १५०० प्रवचन, टेप रिकार्ड से संरक्षित किये गये। जिनमें सृष्टि के अनन्तकाल की अमूल्य धरोहर निहित है। हम उनको व्यवस्थित रूप से और अनुसन्धानात्मक दृष्टि से पुस्तकों के रूप में प्रकाशित कर रहे हैं। परमात्मा की अनुपम कृपा से प्राप्त, इस अमूल्य धरोहर को जन जन तक पंहुचाने के प्रयास में योगदान देने के लिए, प्रत्येक वैदिक धर्मी को सहयोगी बनना चाहिए। जिससे हम सृष्टि के आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक की मानव गाथा को सभी के सम्मुख रख सकें। विश्व कल्याणार्थ की भावना से निहित इस महान ज्ञान की वसुधैव कुटुम्बकम की संस्कृति को प्रसारित कर सकें।

नवरात्रि अनुष्ठान पर्व-ऐतिहासिकता एवं उपयोगिता

अखंड ज्योति 72.03.16

यह सर्व जगत् है एक ज्योति के आधार पर स्थित रहने वाला है। क्योंकि संसार में जो चेतना है, वह चेतना उस मेरे प्यारे प्रभु की है और उसको हमारे यहाँ अखण्ड ज्योति कहा जाता है। क्योंकि ज्योति के रूपों में परिणित रहने वाला वह मेरा प्यारा प्रभु है।

जब मैं माता के द्वार पर जाने का प्रयास करता हूँ तो ऐसा प्रतीत होता है कि माता के गर्भस्थल में उस अखण्ड रूपमयी ज्योति का प्रकाश हो रहा है, जिस ज्योति के आधार पर माता के गर्भस्थल में जो जरायुज रहता है वह जरायुज उस अखण्डमयी माँ ज्योति के आधार पर स्थित रहने वाला है। आज मैं उस ज्योति के रूपों का वर्णन करने आया हूँ। मेरे प्यारे महानन्द जी की कुछ प्रेरणा है और कुछ वैदिक पठन-पाठन का क्रम भी इसी प्रकार का है। जिससे हमें यह प्रतीत होता है कि हम उस अखण्डमयी माँ ज्योति को जानते चले जाएँ,जो अखण्ड रूपों में परिणत हो रही है।

माता के गर्भस्थल की विवेचना कर रहा था। माता के उस ब्रह्मरन्ध्र में सूक्ष्म-सूक्ष्म वाहक नाड़ियाँ होती हैं। उन नाड़ियों का सम्बन्ध माता के ब्रह्मरन्ध्र से होता है। ब्रह्मरन्ध्र उसे कहा जाता है जैसे हमारे यहाँ तीन प्रकार के मस्तिष्कों का वर्णन आता रहता है। जैसे मस्तिष्क है, लघु मस्तिष्क है और हृत्केतु मस्तिष्क है। तीन प्रकार के मस्तिष्कों का प्रायः वर्णन आता रहता है। माता के इस ब्रह्मरन्ध्र में एक श्वेत्ता नाम की नाड़ी होती है जिस श्वेत्ता नाम की नाड़ी में से लगभग ६४ प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। वह जो ६४ धाराएँ हैं। उसमें से ७२ प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। उन धाराओं का सम्बन्ध वायुमण्डल से है। द्यु-लोक तक माना है। उन नाड़ियों का सम्बन्ध पुनः विज्ञान की आभाओं को, परमात्मा की आभाओं को लेकर के बेटा! वह नाड़ियों में नाना मस्तिष्कों में रमण करती हुई वे जो वाहक सुन्दर धाराएँ हैं माता के गर्भस्थल में जब हम जैसे प्यारे पुत्र होते हैं तो मुनिवरों! वह अखण्ड रूप से ज्योति जागरूक हो रही है माता के गर्भस्थल में वे जो सूक्ष्म धाराएं हैं द्यु-लोक से उस ज्योति को घृत प्राप्त होने लगता है। माता के गर्भस्थल में वह ज्योति जागरूक रहती है।

माता का कर्त्तव्य है कि अपने ब्रह्मरन्ध्र में उस अखण्ड ज्योति को जागरूक करके गर्भ में स्थित बालक के ब्रह्मरन्ध्र को ज्योतिष्मान करें,क्योंकि उसी ज्योति के आधार पर बालक का मस्तिष्क बनता है। लघु-मस्तिष्क बनता है। हृत् मस्तिष्क बनता है। इसके पश्चात् ब्रह्मरन्ध्र का निर्माण होता है। तो वह जो ज्योति आनन्दमयी माँ है वह जो ज्योति रूप से अखण्ड रूपों से संसार में परिणत हो रही है उस अखण्ड

ज्योति को जागरूक करना एक मेरी प्यारी माता का कर्त्तव्य है। जब माता उस ज्योति का साक्षात्कार कर लेती है तो उस माता का कितना उज्ज्वल सौभाग्य है। वह माता कितना विज्ञान में परिणत रहने वाली है। जिस अखण्ड रूप ज्योति को प्राप्त करने वाली मेरी माता का बालक जरायुज में उसी ज्योति में पनपता है, उसी ज्योति में वह ज्योतिष्मान होता रहता है। तो हमारे यहाँ उसको अखण्ड ज्योति कहा गया है।

हे मानव! तेरे इस उदर में जो जठराग्नि अपना कार्य कर रही है,जो भी तुम आहार करते हो, नाना प्रकार के पदार्थों का पान किया जाता है नाना प्रकार के पदार्थों को वही एक अखण्ड ज्योति है, जिसको जठराग्नि अनेक रूपों में परिणत कर देती है। जब वह अखण्ड रूपों में मानव के शरीर में परिणत रहती है तो उस ज्योति को पान करने वाला उस ज्योति को अपने में धारण करने वाला एक मानव विज्ञान की रूपरेखा को बनाने लगता है। उस अखण्डमयी ज्योति को अपने में स्वयं धारण करता है।

वह जो मानव के शरीर में अखण्ड ज्योति जागरूक है जब तक मानव जीवित रहता है, अखण्ड ज्योति जागरूक रहती है। जब यह ज्योति अपने विशेषाधिकार को त्याग करके लोक में प्रचलित हो जाती है, उस समय मानव का शरीर ज्योतिष्मान न रहता हुआ शव बन जाता है। उस मानव का अपना कोई अस्तित्व नहीं रहता। तो आज हमें उस अखण्ड ज्योति को जानना चाहिए जो उज्ज्वल रूपों में परिणत हो रही है।

नवरात्रि

आज वह दिवस है जिस दिवस में हमारे पुरातन काल में,द्वापर काल में, त्रेता काल में और भी कालों में ,जिसको हमारे यहाँ नौ नमःप्रभात कहा गया है। जिस दिवस में कृषक और राजा-प्रजा मिलान करते हैं। अपने प्रत्येक गृह में सुगन्धि का संचार किया जाता है। वह जो माँ है,उस माँ की पूजा की जाती है जिस माँ ने हमें जन्म दिया है। जो माता हमारे इस मानव शरीर में अखण्ड रूपों से ज्योति प्रदान करने वाली है। उस माँ का पूजन, पुरातन काल में बहुत समय हुआ।

अनुष्ठान पर्व

राजाओं के यहाँ जब अनुष्ठान होते थे इसको एक शब्द में अनुष्ठान कहते हैं। अनुष्ठान का अभिप्राय संकल्प है। इस संकल्प में जो पृथ्वी की गति है वह धीमी रहती है सूर्य की गति कुछ ऊर्ध्व होती है। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने इसको नवरात्र कहा है। इस मानव शरीर में नौ द्वार कहलाए गए हैं। इन

नौ द्वारों को संयम में करते हुए इसमें योगीजन योगाभ्यास करते हैं। इन नौ द्वारों को संयम के द्वारा एक सूत्र में लाने का प्रयास करते हैं। अष्टचक्रा नवद्वारा, यह वह नगरी है जिसको महाराजा मनु ने इनके अनुकरण में ही अयोध्या का निर्माण किया। इस मानव शरीर से ही जगत् का निर्माण होता रहा है। तो आज हमें इन नौ द्वारों में उच्चता को लाना है। क्योंकि उनमें जो अखण्ड रूपों से ज्योति जागरूक हो रही है,उस ज्योति को पुनः से जागरूक करना है। इसको हमारे यहाँ यज्ञ ही कहा गया है। साधारण पुरुष नौ रूपों में माँ दुर्गा की उपासना करते हुए,इस को दुर्गुणों को नष्ट करने वाली है। दुर्गुणों को कौन नष्ट करती है? हमारे यहाँ दुर्गा का बड़ा सुन्दर वर्णन आता है। वर्णन क्या आता है कि दुर्गा की उपासना करो। उपासना का अभिप्राय यह है माँ प्रकृति की उपासना करो,जिस प्रकृति के गर्भ में सर्वत्र वनस्पतियाँ लालायित हो रही हैं,मानव का और प्रत्येक प्राणियों का अन्न, पृथ्वी के गर्भ में परिणत हो रहा है आज इस प्रकृति की हम उपासना करने वाले बने। क्योंकि यह प्रकृति हमारी माँ है, वसुन्धरा है। इस वसुन्धरा को जानने का प्रयास करें। और वसुन्धरा इसीलिए कहते हैं कि इसके गर्भ में प्रत्येक प्राणी वशीभूत हो रहा है।

दुर्गा-माता

तो हमारे ऋषि मुनियों ने इसको अनुष्ठान माना है। अनुष्ठान का अभिप्राय यह है कि इसमें यज्ञ होते हैं। यज्ञ का नाम ही अनुष्ठान कहा जाता है। अनुष्ठान का अभिप्राय यह कि व्रती रहना। व्रती क्या है? संकल्प सहित रहना, अपने नौ द्वारों को संयम में लाना। ज्ञान इन्द्रिय-कर्म इन्द्रियों से हम किसी भी द्वार से किसी प्रकार का अपराध न करें, ऐसा संकल्प बनाने वाला ऐसा नौ व्रत धारण करने वाला ही माँ की उपासना कर सकता है।

यज्ञ के अनुष्ठान

हे माँ! तू कितनी भोली है, तू वास्तव में ज्योति है, तू जागरूक हो रही है, संसार को चेतनित बनाने के लिए,माँ ! तेरा स्वरूप मेरे समीप आता रहता है। तो आज हम उस यज्ञरूप ज्योति को अपनाते चले जाएँ। आचार्यजन कहते हैं कि मानव नाना प्रकार के भोग विलास करता रहता है, भोग विलासों में लीन रहता है परन्तु बिना यज्ञ के संसार के भोग विलासों में कोई सार प्रतीत नहीं होता। तो आचार्य कहते हैं कि यह अनुष्ठान नाम एक यज्ञ जैसे अनुकृति यज्ञ है, नौ दुर्गा यज्ञ है, विष्णु यज्ञ है, ब्रह्म यज्ञ है, शिव यज्ञ है, ऋषि यज्ञ है, कन्या यज्ञ है और वृष्टि यज्ञ है, पुत्रेष्टि यज्ञ है, सोमभूमि यज्ञ है नाना

प्रकार के यज्ञों का प्रायः वर्णन आता रहता है।

देवर्षि नारद

जब महात्मा ध्रुव इन्हीं नौ द्वारों की उपासना करता हुआ,इसी माँ प्रकृति की उपासना करने वाला वैज्ञानिक अपनी आभा को लेकर के जब चलता है तो उसका विज्ञान, उसकी आभा प्रकृति के गर्भ में ओत-प्रोत होने लगती है। जब देवर्षि नारद-मुनि के यहाँ महात्मा ध्रुव जिन्होंने षोडश वर्ष की आयु में ही ध्रुवमण्डल की यन्त्रों द्वारा यात्रा की थी। जिसको लगभग करोड़ों वर्षों हो चुके हैं।

महात्मा ध्रुव

देवर्षि नारद के यहाँ अनुष्ठान होता था। वहीं महात्मा ध्रुव ने अनुष्ठान किया और माँ दुर्गे की उपासना की। दुर्गे उसे कहा जाता है,जो दुर्गुणों को नष्ठ करने वाली है। जो अनुष्ठान करता है,माता उसके दुर्गुणों को नष्ट कर देती है। नष्ट किस प्रकार होते हैं?,जब माँ दुर्गा की उपासना,जो दुर्गुणों को हनन करने वाली हो दुर्गुण मानव के उस काल में हनन होते हैं जब मानव अपने को उस माता को समर्पित कर देता है। संसार में जो समर्पित नहीं कर सकता,वह मानव संसार में योग्य नहीं बन सकता। माता अपने गर्भस्थल से बालक को जन्म देती है,पुत्र को जन्म देती है, वह माता बनती है उस काल में जब अपने को समर्पित कर देती है। इसी प्रकार एक योगी है,आचार्य के कुल में जाता है,वह अपने को जब समर्पित कर देता है,अपनेपन को त्याग देता है उस समय वह आचार्य और ऋषि बन जाता है। जब महात्मा ध्रुव ने अनुष्ठान करके अपने को माँ दुर्गा,माँ प्रकृति को समर्पित कर दिया । इन्हीं प्रकृति के गर्भ में से नाना प्रकार के परमाणु, अणु, महा अणु त्रसरेषु, पंचाणु नाना प्रकार के अणुओं को एकत्रित करने वाले महात्मा ध्रुव ने ध्रुवमण्डल की यात्रा करना प्रारम्भ कर दिया। वह कितना बड़ा विज्ञान था। देवर्षि नारद की कितनी विशाल देन थी। माता को अपने समर्पित करने के पश्चात् मानव को कितनी शक्ति प्रदान की जाती है। वह ध्रुवमण्डल कितना विशाल मण्डल है जो पृथ्वी से अरबों, खरबों योजन दूरी पर है।

संयम

हमारे यहाँ विज्ञानवेत्ताओं ने कहा है कि हमारा यह जो पृथ्वीमण्डल है यह जितना प्रबल है ऐसी ऐसी ३० लाख पृथ्वियाँ सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती हैं। जैसा सूर्यमण्डल है, ऐसे-२ एक सहस्त्र सूर्य बृहस्पति में समाहित हो जाते हैं। जैसा बृहस्पति है ऐसे-२ एक सहस्त्र बृहस्पति आरुणि मण्डल में समाहित हो जाते हैं। और जैसा आरुणिमण्डल है ऐसे-२ एक सहस्त्र आरुणिमण्डल ध्रुवमण्डल में

समाहित हो जाते हैं। इतना विशाल मण्डल जहाँ माता के अनुष्ठान करने मात्र से,वह उस माता को अपने को समर्पित करता हुआ,इस पृथ्वी के गर्भ में वसुन्धरा प्रकृति के गर्भ में जो नाना प्रकार के सूक्ष्म-सूक्ष्म परमाणु हैं उन्हें जानना प्रारम्भ किया।

श्रद्धा से संकल्प

अनुष्ठान नाम एक व्रती का है, जो संकल्प धारण करने वाला हो। संकल्पवादी कौन होता है? जो श्रद्धालु हो। श्रद्धालु कौन होता है? जिसका हृदय पवित्र होता है। जब तक हृदय पवित्र नहीं होता,मानव में श्रद्धा नहीं होती,वह श्रद्धा वाला व्रती नहीं बन सकता। श्रद्धा से ही संकल्प धारण किया जाता है।

तो आज मानव को यह विचारना है कि हम उस अखंड ज्योति को जानना चाहते हैं जो मानव के हृदय में प्रदीप्त रहने वाली है। वह अखंड ज्योति है जो सूर्य लोक में रमण कर रही है। सूर्य में ही अखंड रूप में परिणत हो रही हैं,वही अखंड ज्योति है,जो प्रातः काल उदय होती है, सायंकाल को अस्त हो जाती है। और भी गम्भीरता में जाओ,तो सूर्य कदापि भी अस्त नहीं होता। यह ज्योति सदैव जागरूक रहती है। यह पृथ्वी का चक्र है चक्र के आँगन में पृथ्वी आती रहती है। दिवस और रात्रि बनते रहते हैं। परन्तु वह सूर्य में ज्योति है,उसका विनाश नहीं होता, उसका अभाव नहीं होता, वह अखंड रूपों में जागरूक रहने वाली है। हम उस अखंड माँ की ज्योति को जानने के लिए सदैव उत्सुक रहें । जिस ज्योति को जानते हुए यह मानव अपनेपन में विचारने लगता है,अनुभव करने लगता है कि वह ज्योति तो मेरे हृदय में प्रदीप्त हो रही है। आज मैं उस ज्योति को,लोक की ज्योति को, हृदय की ज्योति को,दोनों का समन्वय करना चाहता हूँ। तो वह कितना विशाल विज्ञान में परणित हो जाता है।

महाराजा अश्वपति

तो वैदिक सम्पदा हमें बारम्बार उपासक बनने के लिए प्रेरणा दे रही है। हमें यह आदेश प्राप्त हो रहा है कि हम उस माँ की गोद में जाने का प्रयास करें। पुरातन काल में महाराजा अश्वपति के यहाँ यह ज्योति थी। लगभग उनकी २८५ वर्ष की अवस्था थी और लगभग १२ वर्ष की अवस्था में उनका नाम उपनयन संस्कार हुआ। उसी संस्कार में आचार्यों ने अखण्ड ज्योति को जागरूक किया। वह ज्योति लगभग जीवन पर्यन्त अखण्ड रूपों में प्रदीप्त रही। वह यज्ञमय ज्योति थी। यज्ञ का अभिप्राय है शुभ कर्म। वह जो यज्ञमयी ज्योति है,जिसमें सुगन्ध उत्पन्न होती हो,दुर्गन्ध को निगलने वाली हो, आज वह जो अखण्ड ज्योति है वह प्रत्येक मानव के गृह में प्रदीप्त रहनी चाहिए। मुझे वह समय भली-भांति स्मरण है जब

वहाँ ज्योति जागरूक रहती थी।

अखण्ड ज्योतिमयी

आज हमें ज्योति के ऊपर विचार करना चाहिए। वह जो हृदय में ज्योति जागरूक हो रही है, वह जो सूर्य में ज्योति है,चन्द्रमा में ज्योति है, पृथ्वी में ज्योति है,आपो में ज्योति है, वायु में ज्योति है और अन्तरिक्ष में जो ज्योति है। प्रदीप्त हो रही है, जो ज्योति द्युलोक को चेतनित बनाने वाली है उस ज्योति को प्रत्येक मानव को जानना चाहिए वह ज्योति है क्या? वह ज्योति एक वह चेतना है। जिसको उस अखण्ड ज्योति का प्रकाश प्राप्त हो जाता है वह अखण्ड ज्योतिमयी बन जाता है। वह ज्योति मानव के ब्रह्मरन्ध्र में प्रदीप्त रहने वाली है। वह ज्योति हृदय में हृदयलिंगमयी ज्योति कहलाती है। जिस ज्योति का स्वरूप सर्व ब्रह्माण्ड में पिण्डाकार प्रतीत होता रहता है। हमारे ऋषि मुनियों ने कहा है कि जब मानव समाधिस्थ होने लगता है ब्रह्मचरामि,मानव जब ब्रह्म को चरता है तो उसी ज्योति के प्रकाश में चलता है। जैसे सर्प होता है वह मणि के प्रकाश में चलता है,अपने उदर की पूर्ति करता है इसी प्रकार जो योगीजन ज्योति के प्रकाश को जानते हैं,जो ब्रह्मचारी होते हैं, वह उस ज्योति के प्रकाश में ब्रह्म को चरते हैं।

ब्रह्मरन्ध

वे कैसे चरते हैं? उस ज्योति को उस समय जागरूक करते हैं, ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्व गति बन जाती है। जैसे ज्योति की ऊर्ध्व गति होती है। जब ऊर्ध्व गति बन जाती है तो मानव का जो ब्रह्मरन्ध्र है,ब्रह्मरन्ध्र के पिछले भाग में जैसे पीपल का वृक्ष होता है और उसका जो पत्र होता है उसका जो अर्द्ध भाग होता है उसके समान अष्टकोण रूप एक स्थल होता है उसमें ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्व गति हो करके वह ज्योति प्रकाशमयी बन जाती है। उसमें से १-सुकेत, २-श्रृंगी, ३-घ्राणकेतु, तीन नाड़ियों का जन्म होता है। एक-एक नाड़ी में से ७२-७२ धाराओं का जन्म होता है। वे धाराएं वायुमण्डल में प्रसारित हो जाती हैं। जो योगी उस स्थल को पीपल के पत्र के अर्द्ध भाग का जो स्थल है उसमें जब ब्रह्मचर्य की गति उर्ध्व होकर के सुकेता नाम की नाड़ी ऊर्ध्व गति को जब प्राप्त होने लगती है तो वह योगी उस अखण्ड ज्योति के प्रकाश में सर्वत्र ब्रह्माण्ड का दिग्दर्शन कर लेता है।

तो जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वार पर विराजमान होता था,तो इस ज्योति के सम्बन्ध में बहुत विचार विनिमय होता रहा। तो यह जो लोक में अग्नि है इस अग्नि को प्रकाश में लाने का प्रयास करते

हुए अपने हृदय में इसका आचरण करने वाले बनें। तो आज हमें इस अखण्ड ज्योति को जानने को प्रयास करना चाहिए। जिस ज्योति के लिए हमारे ऋषि मुनि,आचार्यजनों का सदा परम्परागतों से ही, जानने का प्रयास होता रहा है और उसे जानना चाहिए क्योंकि उसको जानने वाला जो मानव होता है वह कदापि संसार में अपनी आभा को नहीं त्यागता।

नव द्वारों की अशुद्धता का शोधन

इस अखण्ड ज्योति के अनुष्ठान के साथ में ज्योति की प्राप्ति का प्रयास करें। अनुष्ठान योगीजन करते हैं। अनुष्ठान जब करते हैं तो अपने जीवन को महान् बनाने का प्रयास करते हैं। अनुष्ठान का अभिप्राय है व्रती रहना। व्रती का अभिप्राय है अपने नौ द्वारों को संयमित बनाना। नौ द्वारों में अशुद्धता का भरण न करना। महत्ता का भरण करना,नौ द्वारों को जानना है और जो मानव नौ द्वारों को जानता है, वह प्रभु की आभा का दिग्दर्शन करता है। मुझे वह समय भली-भांति स्मरण आता रहता है, जब वैज्ञानिकजन इसी ज्योति के प्रकाश में नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में जाने का प्रयास करते थे। हमारे यहाँ आचार्यों को कहा है,अनुष्ठानवेत्ताओं को कहा है-हे अनुष्ठानवेत्ताओं ! तुम तो यज्ञमान हो, तुम्हारी गति इतनी ऊर्ध्व होनी चाहिए, इतनी व्यापक होनी चाहिए, इतनी विस्तृत होनी चाहिए कि पृथ्वी से लेकर के सूर्यलोकों में भ्रमण करने वाले बनो। ऐसा हमारे यहाँ ऋषि मुनि कहते हैं। आचार्यों ने कहा है कि आज हम उस अखण्ड ज्योति को जानने का प्रयास करते रहें।

जो अखण्ड ज्योति माता के गर्भ में क्या, मानव की जठराग्नि में क्या, सूर्य में क्या, चन्द्रमा में क्या, पृथ्वी में क्या,नाना प्रकार के लोक लोकान्तरो में वह एक अखण्ड ज्योति जागरूक हो रही है। उसी ज्योति का नाम ब्रह्म कहा गया है। उसी ज्योति के प्रकाश में प्रत्येक प्राणी अपना कार्य कर रहा है। तो हम अखण्ड ज्योति को जानें| अपना अनुष्ठान करते हुए उस प्रभु की हमें प्राप्ति हो। वह उसी काल में होगी जब कि विज्ञान का स्वरूप हमारे समीप होगा। क्योंकि विज्ञानवेत्ताओं के समीप आने वाले प्राणी के लिए यह ब्रह्म दूर नहीं होता। वह ब्रह्म में समाहित रहता है। ब्रह्म उसमें समाहित रहता है। उनको द्वितीय भाव नहीं होता। वे परमात्मा के गर्भ में क्रीड़ा करते हुए आनन्द और मोक्ष को प्राप्त हो जाते हैं।

तो हम अनुष्ठान करें, जैसा महात्मा ध्रुव ने किया था। देवर्षि नारद मुनि के यहाँ उनकी कितनी ऊँची उड़ान रही है। क्योंकि यह जो सर्व संसार है यह उस माँ का गर्भाशय है। उसी के गर्भ में हम सर्व प्राणी वशीभूत रहते हैं। उस माँ के गर्भ में हम विराजमान हैं। उसको जानना हमारा कर्त्तव्य है। तो वह जो

अखण्डमयी ज्योति संसार को प्रकाशमान बना रही है, उस ज्योति को जानने का प्रयास करते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। प्रवचन सन्दर्भ 16-03-1972

अष्टांग योग का अनुष्ठान करें 72.03.17

तो वह जो परमपिता परमात्मा है वह ज्ञान और विज्ञान में रमण करने वाला है। जितना भी यह जगत् है वह सर्वत्र जगत एक विज्ञानशाला के रूप में दृष्टिपात आने लगता है,तो इस विज्ञानशाला के सम्बन्ध में प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है कि उस विज्ञानशाला में विराजमान होकर के विज्ञानवेत्ता बनने के लिए तत्पर हो जाए। क्योंकि हमारे यहां यह जो माँ वसुन्धरा है, जिसके गर्भ में यह संसार वशीभूत हो रहा है, वह माँ क्या है? माँ उसे कहते हैं जिसमें ममता होती है। ममता क्या है? जो हमें अनुपमता प्रदान करने वाली है। वह अनुपमता एक महान् ज्योति है। जैसा हमने कल के वाक्यों में कहा इसमें पूर्व शब्दों में कहा गया,कि वह जो अखण्ड ज्योति है। जिस ज्योति के प्रकाश में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या प्रत्येक ऋषि मण्डल उसी की ज्योति में ज्योतिमान हो रहा है।

तो वह जो अखण्ड ज्योति है, उस को हमें जागरूक करना चाहिए। उस ज्योति को हमें शान्त नहीं रहने देना चाहिए परन्तु ज्योति में घृत देना हमारा कर्त्तव्य है। उस आध्यामिक ज्योति का जो घृत क्या है? उस आध्यामिक ज्योति का जो घृत है वह ज्ञान है, विज्ञान है। क्योंकि ज्ञान और विज्ञान से मानव का आत्मबल बलिष्ठ होता है। जैसे लोक में ज्योति जागरूक रहती है,ज्योति प्रदीप्त रहती है और उसको ज्योति कहते हैं। परन्तु जब तक घृत नहीं रहता तो कहते हैं ज्योति शान्त हो गई।इसी प्रकार यदि हमारे मानव जीवन में आध्यात्मिक वाद नहीं है, दैवी शक्ति नहीं है, तो जब यह नहीं रहेगी, तो हमारा आत्मबल नहीं रहेगा। तो उसको प्रायः प्राणी शान्त हो गया है, क्योंकि इसमें दोष आ गए हैं। इतनी विडम्बना आ गई है कि वह ज्योति शान्त हो गई है। तो हमें उस ज्योति को जागरूक करना है।

इस लोक की ज्योति,सूर्य की ज्योति, प्रातःकाल से सांय तक रहती है। परन्तु किसी भी काल में शान्त नहीं होती। इसी प्रकार हमें उस ज्योति को जागरूक बनाना चाहिए। हमारे ऋषि मुनि पूर्व काल में अनुष्ठान करते रहते थे,हमारे यहाँ आध्यात्मिक बल को बलिष्ठ करने के लिए प्रायः अनुष्ठान होते हैं। अनुष्ठानों का अभिप्राय यह है कि हमारा जो मानवीय जीवन है, हमारी जो मानवीय धारा है वह इतनी निष्ठानवान होनी चाहिए, उसमें दृढ़ता होनी चाहिए, इतना उसमें प्रकाश होना चाहिए जिससे वह संसार में एक आध्यात्मिक वेत्ता बन करके ज्ञान और विज्ञानमयी प्रयास करता रहे। तो माता को हमें समर्पित कर ही देना है। जो संसार में माँ के लिए अपने को समर्पित नहीं कर सकता, वह संसार में कोई मानव नहीं, न वह माता का पुत्र ही होता है।

तो वह माँ कौन है? जिसको हमें अपने को समर्पित कर देना है। जब माता का प्रिय बालक होता है। तो माता के आधीन माता के संरक्षण में रहने वाला हो है। उस समय जब बालक क्षुधा से पीड़िता होता है,तो माता को अपने को समर्पित कर देता है। माता उसे अपने हृदय में धारण करके उसकी उदर की पूर्ति कर देती है। वह उदर की पूर्ति करने वाली जो ममतामयी माँ है, उससे वह बालक प्रसन्न रहता है, माता भी अत्यंत प्रसन्न हो जाती है। इसी प्रकार जो हमारी माँ है जो चैतन्य है ज्योतिष्मान है,उसे हमें जैसे बाल्यकाल में बालक माता के समीप रहता है, अपने को युवाकाल में समर्पित कर देता चाहिए। वह जो परम पिता परमात्मा आनन्दमय रहने वाला है। उसको वेदों ने ममतामयी कहा है, माता के रूपों में परिणत किया है। तो उसे अपने को समर्पित कर देना चाहिए। जो मानव इस संसार में प्रभु के समर्पित होना चाहता है,वह मानव संसार में सौभाग्यशाली होता है। तो आज हमें सौभाग्यशाली बनना है और उस माँ की जो चेतना है,जो संसार को चेतनित बनाने वाली है, जिसके गर्भ से इस संसार का जन्म होता है उस माता की यहाँ उपासना करनी चाहिए।

जिस माता के द्वार पर मानव शरीर का निर्माण होता है। इसको हमारे यहाँ नौ घृति कहा गया है। हमारे यहाँ नौ रात्रियों का बड़ा सुन्दर वर्णन आता है। ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में भी इसकी बड़ी प्रसन्ना आई है और वह प्रशंसा क्या है? नौ द्वारों में जो अज्ञानता के कारण अन्धकार छा गया है मानव को अनुष्ठान करते हुए एक-एक रात्रि में एक-एक इन्द्रिय के ऊपर विचारना, द्वारों के ऊपर विचारना कर्त्तव्य है और किस-किस प्रकार की आभाएं है? उनको विचार विनिमय करना उन नौ द्वारों के विज्ञान को जानना, उसका नाम नवरात्र कहलाया गया है।

जागरण

रात्रि का अभिप्राय यह है कि यह जो अन्धकार है। अन्धकार से जो प्रकाश में लाने वाला हो उसी को जागरण कहा गया है। जागरण का अभिप्राय यह है जो मानव जागरूक रहता है। जो जागरूक रहता है उसके यहाँ रात्रि कोई वस्तु नहीं होती, क्योंकि रात्रि उनके लिए होती है जो जागरूक नहीं रहते। जो आत्मा से जागरूक हो जाते हैं वह प्रभु के राष्ट्र में चले जाते हैं।वह उन नौ रात्रियों में नहीं जाते। वह जो नौ माह हैं,जो माता के गभस्थल में जाना होता है,वह नौ रात्रि के रूप में परिणत होते हैं। क्योंकि गर्भ में उसे जाना नहीं होता। वह गर्भ कैसा अन्धकार है? जहाँ रूद्र रमण कर रहा है। जहाँ मल और मूत्र की मलीनता है वहाँ धाराएं नाना रूपों में रमण कर रही हो। उसमें एक आत्मा वास करता है, शरीर

का निर्माण कराता है। अरे, कैसा अन्धकार है। अभिप्राय यह कि जो मानव नौ द्वारों से जागरूक रहता है वह किसी भी द्वार के उस अन्धकार में नहीं जाता जहाँ मानव का महा कष्टमय जीवन है।

आचार्यों ने कहा उस द्वार से माता के गर्भ में न जाना हो, वह जो बड़ा भयंकर अन्धकार है। कैसा अन्धकार है वहाँ न तो अपना विचार विनिमय कर सकता है, न अनुसन्धान कर सकता है, न विज्ञान में जा सकता है परन्तु वहाँ अन्धकार ही अन्धकार रहता है।

रात्रि

तो हम उस माँ के गर्भ में जाने का प्रयास करें। जिसके गर्भ में जाने से रात्रि कोई वस्तु नहीं होती। रात्रि क्या है? रात्रि नाम अन्धकार का है। इसलिए उस अन्धकार को नष्ट करने के लिए ऋषि मुनियों ने अपना अनुष्ठान किया। गृह आश्रमवेत्ताओं से कहा, हे गृह आश्रम में रहने वाले पति-पत्नी! तुम वास्तव में अपने जीवन में अनुष्ठान करो। कैसा अनुष्ठान करो? दैवीमय अनुष्ठान करो! देवी यज्ञ का अभिप्राय यह है,दैविक ज्योति को जागरूक करो। दैविक ज्योति का अभिप्राय यह कि जो दैविक ज्ञान है, देवताओं का ज्ञान है, विज्ञान है, उसे अपने में भरण करने के लिए उत्सुक हो जाओ। वही तो तुम्हारी एक आनन्दमयी ज्योति है। जिसको जानने के लिए हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने बहुत ही प्रयत्न किया। तथा प्रयत्नशील होते रहे इस आत्मिक अग्नि को, इस दैविकता को जान करके आज तुम द्यु लोक में जाने की उत्सुकता करो, जाने वाले बनो।

सप्तजिव्हा अग्नि

द्यु लोक क्या है? जहाँ अग्नि की ज्योति जागरूक हो रही है। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने ऐसा कहा है कि यह जो अखण्ड ज्योति जागरूक हो रही है, अग्निमयी ज्योति है इसकी वह सप्ता जिव्ह कहलाती है और एक एक जिह्वा में से एक एक सहस्र जिव्हओं का जन्म होता है और एक एक सहस्र जिव्हओं में से लगभग ६६.६६ धाराओं का जन्म होता है और वह जो ६६वीं धारा है उसमें से एक एक सहस्र धाराओं का जन्म होता है। इसीलिए तो इस अग्नि के ऊपर इस ज्योति के ऊपर जब शब्द विराजमान होता है तो इसकी भयंकर गति बन जाती है। वह द्यु लोक में रमण करने वाला बन जाता है।

शब्दों का वाहन

ऋषि कहते हैं कि शब्दों का वाहन क्या है? शब्दों का जो वाहन है वह यह अग्नि है, ज्योति है जिसे विद्युत कहा गया है। एक क्षण समय में एक शब्द उच्चारण किया जाता है। उसका जो वाहन है वह

अग्नि है, ज्योति है। वह एक क्षण समय में एक बार पृथ्वी की परिक्रमा करता है इतना भयंकर इस ज्योति का प्रभाव है संसार में। परन्तु इस ज्योति को जानना चाहिए। जो नही जानता, वह धर्मज्ञ अपनी आत्मा ज्योति को जाने। आत्मा ज्योति को जो जान लेता है वह विशाल ज्योतिष्मान बन जाता है।

तो इतनी धाराएं सब द्यु मण्डल में समाहित रहती हैं। विचारा जाता है जो द्यु मण्डल में यह विद्युत जागरूक हो हरही है, नाना रूपों से ज्योति जग रही है। जिस प्रकार लोक में अग्नि और ज्योति में घृत का प्रसार किया जाता है जब ज्योति जागरूक रहती है इसी प्रकार आध्यात्मिक वेत्ताओं ने कहा है कि आत्मा की ज्योति जब तक ज्ञान और विज्ञान रूपी घृत है। परन्तु यह जो द्यु लोक में अग्नि प्रदीप्त हो रही है, अरे, इसका घृत क्या है? इसको भी तो हमें जानना है। द्यु लोक में जो अग्नि प्रदीप्त हो रही है इसका जो घृत है यह जो सूक्ष्म रूपों से यज्ञ किए जाते हैं अथवा ज्योति जागरूक की जाती है इस स्थूल का जो सूक्ष्म रूपान्तर हो जाता है और सूक्ष्म रूपान्तर का और भी सूक्ष्म रूपान्तर करके उसकी जो विचरणता है उस घृत का सूक्ष्म रूप बन करके द्यु लोक में प्रसारित हो गया। वह जो द्यु लोक में ज्योति जागरूक हो रही है अरे, वही घृत कार्य करता है। जो घृत का सूक्ष्म रूप बनकर के इस लोक में से जाता है, स्थूल अग्नि से जाता है। वह सूक्ष्म रूप बन करके सूक्ष्मता को प्राप्त हो जाता है।

माँ दुर्गा

तो हमें ममतामयी माँ की गोद में जाना है। कौन-सी माँ है? जिसको हमारे यहाँ दुर्गे कहा गया है जिसको हमारे यहाँ माँ काली कहते हैं, जिसको वैष्णवी कहा जाता है। हमें उस माँ की गोद में जाना है। हमारे यहाँ योगिनी बनकर के रहने वाली यह माँ दुर्गा कहलाई गई है। यह जो प्रकृति है यह जो नाना प्रकार के आदेशों वाली है इसको भी देवी कहा गया है। यह कैसी देवी है? यह कैसी वसुन्धरा है? कैसी माँ है? जो हमें देती है? यह जो प्रकृति है इसी के द्वार से मानव के स्थूल रूप का जो भोजन है, स्थूल रूप की जो प्रवृत्तियां है वह इस प्रकृति से हमें प्राप्त होती रहती हैं। इसीलिए हमें इस प्रकृति को जानना चाहिए। जो प्रकृति नाना प्रकार के रूपों में परिणत हो रही है। जैसे माँ है, मेरी पवित्र माताएं हैं वे कितने रूपों में परिणत हो रही हैं। कहीं ब्रह्मचारिणी रूप है। कहीं देवी रूपों में हैं, कहीं माँ के रूप में है। इसी प्रकार यह जो माँ प्रकृति है, यह नाना प्रकार के रूपों में मानव को दृष्टिपात आती रहती है। कहीं पृथ्वी के रूपों में है तो कहीं खनिज के रूपों में है। कहीं खाद्य के रूपों में है। कहीं शक्ति के रूप में परिणत हो रही है। आज हमें इसी माँ दुर्गा को,प्रकृति को जानना है। यह कैसी प्रकृति है।

मन

जब मानव प्रकृति से प्रवृतियों पर आ जाता है तो प्रवृत्ति दो प्रकार की होती है। एक अशुद्ध प्रवृत्ति होती है एक शुद्ध प्रवृत्ति होती है जब प्रकृति की उपासना अथवा विज्ञान में चले जाते हैं तो शुद्ध प्रवृत्ति बनी रहती है मानव की। इसी प्रकृति का जब हम रूपान्तर में ध्यान करके अशुद्ध कल्पना करने लगते हैं तो वह जो प्रकृति का एक विचार है, जो धाराएं है जो तरंगे हैं वही प्रवृत्ति है। उन प्रवृत्तियों पर मन के द्वार से, मन से संयम करना चाहिए। क्योंकि मन जो है, यह माता वसुन्धरा की सबसे सूक्ष्म देन है। इस मानव को क्योंकि सबसे सूक्ष्म संसार का यदि कोई तत्त्व है तो वह मन कहलाया गया है। जो इतना गतिमान है। इसीलिए उस माता को हमें समर्पित करना है जो माता प्रकृति है। इस मन को जानने वाला मानव उस प्रकृति के गर्भ को जान नेता है।, एक एक कण को जान लेता है। और उसके ऊपर योगी का आत्मा जब विश्राम करता है तो उस समय वह सर्वत्र ब्रह्माण्ड का भ्रमण कर लेता है। तो यह जो मन है,यह प्रकृति का सबसे सूक्ष्मतम तत्त्व माना गया है।,आज हमें इस तत्त्व को जानना है, इस तत्त्व के ऊपर जाना है। इसीलिए मन कहीं का कहीं रमण करता है, वह समुद्र की तरगों में रमण करता है और सूर्य की आभा में रमण करने वाला है,

गन्धर्व लोकों में यह गति करता है और निकृष्ट से निकृष्ट भी गति करने लगता है। प्रवृत्तियों पर जब सयंम हो जाता है,उन प्रवृत्तियों का अपना वाहन बना करके वह आत्मा के लोक में चला जाता है। यही मन है,जो प्रकृति के रूपों में आत्मा के लोक में चला जाता हैं। वहाँ भी यह मिलकर के प्राण और मन का संचार होकर के वह जो दैवी सम्पदा है,दैवी जो विचारधारा है इनको वाहन बना लिया जाता है।

महिषासुर मर्दनी

बकासुर है,महिषासुर है,महिषासुरमर्दनी कहा जाता है दुर्गे को, महिषासुर क्या है? यह जो मन है, जो विद्या है इसको वह दुर्गा कहा गया है। इसी विद्या के द्वार से यह जो ब्रह्म विद्या है, ब्रह्माग्नि है, ब्रह्मवेदना है,उस वेदना के आ जाने पर वह महान् वह महिषासुर मर्दनी है। महिषासुर कौन है? महिषासुर ये जो अशुद्ध प्रवृत्तियां हैं, यह जो मन है इस मन के ऊपर संयम किया जाता है। इसी ज्ञान और विवेक के द्वारा, इसी ब्रह्म विद्या के द्वारा, इसी माँ दुर्गा की शरण में जाने से यह सर्वत्र प्राप्त होने के पश्चात्, यह जो महिषासुर बना हुआ है, महिषासुर को वध करके यह सिंह पर सवार हो जाते हैं। इसका वाहन सिंह बन जाता है। सिंह क्या है? यह प्राणों के ऊपर आत्मा चेतना जब विश्राम करने लगती है यह जो

महिषासुर है यह मृतक हो करके इस प्राण में लय हो जाता है। उस समय आत्मा की जो ज्योति है, वह जो ज्ञान है, विज्ञान है, वह जो महालक्ष्मी जिसको दुर्गा कहते हैं उस आत्मा का नाम दुर्गवेति प्रकाशमयी कहा गया है। वह प्राण पर सवार हो करके यह अपने प्यारे प्रभु सखा को प्राप्त हो जाता है। इसीलिए उसको महिषासुर मर्दनी कहा गया है।

इसको कहीं ब्रह्मचारिणी कहते हैं कहीं इसको सुहागिनी कहते हैं, कहीं वैष्णवी कहा जाता है, कहीं इस से भी विचिवत कहा जाता है। इसको नाना प्रकार के रूपों में दृष्टिपात किया जाता है। तो जो संसार में इस प्रकृति को दृष्टिपात कर सकता है। कहीं खाद्य तो कहीं खनिज है। खनिज भी कितनी प्रकार का है। खाद्य भी कितने प्रकार का है। जिस प्रकार की उस विज्ञान में पहुँचना होता है, उस समय मानव अपने जीवन में उच्चता को प्राप्त हो जाता है।

अनुष्ठान से प्रवृति निर्माण

मुझे महाराजा अश्वपति के यहाँ राज पुरोहित रहने का सौभाग्य प्राप्त रहा है। यह जो चैत्र का मध्यम भाग है इसमें प्रायः अनुष्ठान किए जाते हैं। यह परम्परा से राजा महाराजाओं के यहाँ राष्ट्र गृहों में प्रजाओं के यहाँ इसमें राजा और प्रजा मिलकर के यज्ञ करते थे। वेदों का पठन-पाठन होता रहता था। माता की उपासना की जाती थी। उपासना का अभिप्राय यह है कि इस प्रकृति की उपासना की जाती। जिससे शुद्ध वायु मण्डल हो, शुद्ध वातावरण हो, जिससे अन्न भी दूषित न हो। यह जो पृथ्वी माता है यह माता गर्भ से परिणत हो रही है। यह माता अपने गर्भ में परिपक्व होती है। इसी प्रकार चैत्र मास में यह जो पृथ्वी है,नाना प्रकार की वनस्पतियां इसके गर्भ में होती हैं। गर्भ में होने के नाते इसमें जितना भी बुद्धिजीवी प्राणी होता है वह माँ दुर्गे की याचना करता है। प्रकृति उपासना करता है। हे माँ! तू आ और हमें यह ममतामयी वनस्पतियां हैं हमारा अन्न है इन्हें तू हमारे गृह में भरण कर दे। जैसे ब्रह्मचारी अपनी विद्या की रक्षा करता है इसी प्रकार माँ यह राष्ट्र की सम्पदा है,प्रजा की सम्प्रदा है। इसमें तू हमें इस अन्न को दे तो यह याचना वैदिक मन्त्रों द्वारा अनुष्ठान करके यज्ञ के द्वारा की जाती है। यह यज्ञ में दी हुई आहुति द्यु लोक को प्राप्त होती है। इसी लिए यह जो नौ रात्र हैं, नौ दिवस हैं, अष्टमी ब्रह्म इसमें उपासना की जाती है। क्योंकि प्रतिपदा से लेकर के और अष्टमी तक पृथ्वी में प्रकृति की गति इस चैत्र माह में शान्त रहती है। इसलिए इसको गति देने के लिए वायु मण्डल का शोधन करने के लिए प्रत्येक मानव यज्ञमयी ज्योति को जागरूक करता रहता है। ऋषिजन कहते हैं, यह ज्योति शान्त नहीं होनी

चाहिए। परन्तु जो उसका अनुष्ठान किया जाता है,व्रती रहकर के संकल्प के द्वारा जब यज्ञपति, होताजन उद्गाता जन आदि यज्ञ करते हैं उस समय यह जो प्रकृतिमयी माँ है यह अपने प्यारे पुत्रों को यह वसुन्धरा बन कर इच्छा के अनुसार फल दिया करती है। फल क्या है? जो ऊँचा कार्य किया जाता है,उस ऊँचे कार्य का ऊँचा ही परिणाम होता है। जब यहाँ प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या याज्ञिक बन जाता है, अनुष्ठान करने लगता है,उनकी प्रवृत्तियां ही जीवन का निर्माण करती हैं और प्रवृत्ति ही वायु मण्डल का निर्माण कर देती हैं। वायु मण्डल जितना शोधित होता है उतना ही कृषक की भूमि पवित्र होती है। अहा! माता पृथ्वी के गर्भ में जो नाना प्रकार की वनस्पतियां हैं वह शोधित हो जाती हैं, पवित्रमयी बन जाती हैं।

नवरात्रि पर्व पर वर्ष में दो अनुष्ठान

इसलिए इस माह में अनुष्ठान किया जाता है। एक वर्ष में दो समय अनुष्ठान होता है। एक अनुष्ठान चैत्र मास में होता है। एक क्वार(आश्विन) माह में अनुष्ठान होता है। इन दोनों का महत्व एक ही है। क्योंकि उस समय पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना की जाती है। और इस माह में, उस बीज का जो फल है, परिणाम है वह गृह में जाता है। इसलिए प्रत्येक गृह में क्या कृषक के यहाँ क्या? राजा के यहीं क्या? यह अखण्ड ज्योति मानव के जीवन में क्या, गृह में सदैव प्रदीप्त होनी चाहिए,जिससे राष्ट्र और समाज ऊँचा बनता चला जाए।

इसमें अन्न की स्थापना की जाती है। अन्नमयी ज्योति जागरूक होती है। अन्न शरीर का घृत है।

इसी प्रकार यह अग्नि उसी काल में प्रदीप्त रहती है। अन्यथा यह अग्नि बिना वनस्पतियों के अग्नियों का अपना कोई महत्व नहीं रहता। इसीलिए आज उस अग्नि की उपासना करते हुए, उस ज्योति को जानने हुए उस माँ वसुन्धरा की याचना करते हुए अपने जीवन में यौगिकता को प्राप्त करना चाहिए।

अष्ट भुजों वाली दुर्गा

तो यह अष्ठ भुजों वाली माँ जो दुर्गा है, यह हमारे यहाँ क्या है? हमारे यहाँ अष्ट भुजों वाली दुर्गा कहा गया है। योग के आठ अंग कहे गए हैं। उन आठ अंगों को संयम से करने वाला माँ दुर्गा को अपने को समर्पित कर देता है। जो आठ अंग आठों भुजाओं को नही जानता जो यौगिकवाद हैं,वह माँ दुर्गा के द्वार पर किसी काल में भी नहीं पहुँच पाता। तो विचार क्या कि आज हम उस माँ की गोद में जाने का प्रयास करें, जो मेरी माँ चेतना है, जो प्रभु है, जो आनन्द देने वाली है, इसका लोक और परलोक से

दोनों से, सम्बन्ध होता है इस लोक की माता दुर्गा यह प्रकृति है, पृथ्वी है। और परलोक की माता अग्नि है।, जो नाना रूपों में प्रदीप्त हो कर के जीवन का घृत बनी हुई है। घृत बनकर के आत्मा को बलिष्ठ हो जाता है तो माता अपने में विचित्र चली जाती है। वैदिक सम्प्रदा को अपने में धारण कर लेती है।

माता की पूजा से अपने को ऊँचा बना

तो हम अपने पन में ऊँचे बनते चले जाए। विचित्र बनते चले जाए उसकी विचित्रता एक महत्ता का प्रतीक कहलाया गया है। तो आज हम अपने देव की महिमा का गुणगान गाते हुए माता ममतामयी को जानते चले जाए। हे माँ! तेरे गर्भ स्थल में हमारा निर्माण होता है आज हम तेरी पूजा करें। तो हमारे मनों के आधार अपने प्यारे पुत्रों का पालन पोषण स्वतः ही करती रहती है। इसीलिए माता की पूजा होनी चाहिए।

जो रूढ़िवादी, माता को त्याग करके पिता की उपासना करते हैं वह आधे अंग की उपासना से कुछ समय में वे रूढ़िवादी समाप्त हो जाते हैं। क्योंकि जहाँ माता का आदर नहीं वह गृह नहीं।, जहाँ माता का अपमान होता है, वह शमशान भूमि होती है।, वह गृह नहीं होता। इसीलिए! माता का पूजन होना चाहिए, माता की उपासना होनी चाहिए परन्तु वह माता कौन? जो जननी है, जो माता अपने गर्भस्थल में बालक का निर्माण करती है। हे निर्माणवेत्ता! हे निर्माण करने वाली माता! तू कैसी ममतामयी है? आज जब हम तेरी गोद में अपने को अर्पित कर देते हैं, तो हे माँ! हम अपने को कितना सौभाग्यशाली स्वीकार करते हैं। इसलिए आज हमें अपने प्यारे प्रभु को, माता को, अपने को समर्पित करने की उत्सुकता रहनी चाहिए। वह जो ज्योति है वह आनन्दमयी है। वह ज्योति सदैव जागरूक रहने वाली है। यह जो लोक का घृत है यही तो मानव की प्रवृत्तियां हैं। यही तो वायु मण्डल का शोधन करती हैं। इसलिए हमें विचारना है हमें अनुष्ठान करना है नौ द्वारों पर संयम करना है। ऋषि मुनियों ने ऐसा कहा है। जब पृथ्वी की गति मन्द हो,तो माता-पिता को,दोनों को संयमी रहना चाहिए। अनुष्ठान करो, और संयमी रहो, परन्तु अनुष्ठान का अभिप्राय, यह कि इस समय में दुर्वासनाएं काम, क्रोध, लोभ, मोह की वासनाएं तुम्हारे द्वार पर नहीं आनी चाहिए। इसलिए हमारे यहाँ अनुष्ठान कहा जाता है। अनुष्ठान का अभिप्राय यह, जहाँ अपने को जाना जाता है, अपने को जानने की प्रवृत्ति मानव की बनाई जाती है। उन प्रवृत्तियां को संयम में करने का नाम अनुष्ठान है। यह हमें प्रायः करना चाहिए। यह जो हमारे यहाँ चैत्र मास का समय होता है इसमें यज्ञ किए जाता हैं,प्रतिपदा से लेकर के और अष्टमी तक यज्ञ होने

चाहिए दैवी यज्ञ होना चाहिए।

परन्तु इस नव रात्रि में यज्ञ करना चाहिए। यज्ञ का अभिप्राय यह है कि अग्नि को प्रदीप्त करके विचारों को सुगन्ध में लिपटा देना चाहिए। जैसे माता का प्रिय बालक विनोद में माता के अंग में परिणत हो जाता है इसी प्रकार प्रत्येक मन्त्र प्रत्येक आभा वेद मन्त्रों की आभा उस देवी यज्ञ के समीप रहनी चाहिए। तो हमें उस रात्रि में नही जाना चाहिए जहाँ अन्धकूप है, माता का गर्भाशय है। हमें यौगिक बनाना चाहिए। यौगिक सम्पदा को अपनाते हुए इस संसार सागर से पार होते हुए (प्रवचन सन्दर्भ 17-02-1972)

माँ दुर्गा का यथार्थ स्वरूप 72.03.18

आज के मनोहर गान में उस परमपिता परमात्मा को सर्वत्र माना है। सर्वत्र का अभिप्राय है जो प्रकृति के कण-कण में ओत-प्रोत है। हम उस परमपिता परमात्मा की आभा का प्रायः वर्णन किया करते हैं। जो परमपिता परमात्मा एक चेतना है और वह संसार को जो चेतनित बना रहे, जो ऋत और सत् में रमण करने वाला है। हमारे यहाँ ऋत और सत् का प्रायः वर्णन आता रहता है और ऋषि मुनियों ने ऋत और सत् के सम्बन्ध में बहुत ऊँची उड़ान उड़ी।

एक-एक वस्तु के ऊपर बहुत अनुसन्धान किया गया। तो आचार्यजनों ने कहा है कि मानव को अनुसन्धान त्ता बनना चाहिए। अनुसन्धान उसे कहा जाता है जो वस्तु को यथार्थ रूपों से जानने वाला हो,उसकी आभा को ज्यों की त्यों उच्चारण करने वाला ही मानव उस आभा को जानने के लिए तत्पर होता है। आज का हमारा वेद पाठ यही कह रहा है। यहाँ आज के मानव की उड़ान भी ऊँची नहीं रही है। यहाँ प्राचीन काल में प्यारी माताओं की उड़ान भी बहुत ही विलक्षण रही है। मुझे वह समय पुनः से स्मरण आ रहा है जहाँ ऋषि कन्याएं एक और चित्त करने वाली वह अनुसन्धान करती रहती थी। उनकी नाना प्रकार की यौगिक क्रियाओं में अभ्यास करने वाले, उन क्रियाओं को अपनाना उनका एक मानवीय कर्त्तव्य कहलाया गया है। मुझे वह समय बारम्बार स्मरण आता है,जब माता अनसूया और महर्षि अत्रि मुनि महाराज दोनों एकत्रित विराजमान होकर के अनुसन्धान करते थे। रात्रि हो, दिवस हो उनका विचारों का यज्ञ प्रारम्भ रहता था। वह जो विचारों का यज्ञ है वह कितना विचित्र है,कितना सुगन्धिदायक है, क्योंकि हम होता बन करके जब यज्ञ करते हैं उस की सुगन्धि से कई गुणी सुगन्धि विचारों की महत्ता की जो सुगन्धि होती है,वह कई गुणी बन करके गृह और वायुमण्डल को पवित्र बनाती चली जाती है।

यज्ञ का भौतिक स्वरूप

हमारे यहाँ नाना प्रकार के यज्ञों का प्रायः वर्णन आता रहता है। आज मैं देवी यज्ञ के सम्बन्ध में अपना संक्षिप्त परिचय देना चाहता हूं। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, देवी यज्ञ होता रहा है। परन्तु यज्ञ का अभिप्रायः क्या है? उसकी दो प्रकार की रूपरेखा है। एक भौतिक है, दूसरी आध्यात्मिक है। परन्तु भौतिक जो यज्ञ है उसका वर्णन किए देता हूं। संक्षिप्त परिचय देना हमारा कर्त्तव्य है। भौतिक यज्ञ में यज्ञमान विराजमान होता है, वह दैवी यज्ञ करने के लिए तत्पर होता है।, दैवी यज्ञ का अभिप्रायः है दैविक विचारधारा को और मानव पर जो दैविक आपत्ति आती है उसको शान्त बना देने के लिए यह

यज्ञ किया जाता है। प्रकृति से जितना कष्ट होता है उसे दैविक कहते हैं। प्रभु से याचना की जाती है कि प्रभु यह आपत्ति हमें नहीं चाहिए। हमारे जीवन में यह प्रकृति शान्त भाव से रमण करती रहे। यही यह जो प्रकृति है यह संसार का उपकार आप के द्वार पर होता रहे। यह देवी यज्ञ दैविक जो आपत्तियां आती हैं दैविक अर्थात् आधिदैविक, आधिभौतिक, मानव पर आपत्तियां आती हैं। ये नहीं आनी चाहिए। ऐसी कामना के साथ अनुष्ठान किया जाता है। उस अनुष्ठान की बहुत ही ऊँची उड़ान रहती है।

यज्ञ और उसके प्रकार

परन्तु अभिप्राय यह कि इसको अनुष्ठान कहते हैं। अनुष्ठान की उड़ान कितनी विचित्र है, उस उड़ान के ऊपर मानव को विचार विनिमय करना चाहिए। मुझे स्मरण है माता अनुसूर्या अनुष्ठान पूर्वक यज्ञ करती रहती थी। यज्ञ का अभिप्राय यह हैं यज्ञ करना। यज्ञ किसे कहते हैं। हमारे यहाँ १५ प्रकार के यज्ञ माने हैं। ७४ प्रकार की यज्ञशालाएं होती थी। इनमें लगभग १५ प्रकार की यज्ञशालाएं मुख्य मानी हैं। एक चतुष्कोण यज्ञशाला होती है। एक त्रिकोण होती है, सप्तकोण होती है। परन्तु जो देवी यज्ञ करने वाले होते हैं,जो देवी के कर्मकाण्ड को जानते हैं वह सप्त जिह्वा वाली यज्ञशाला का निर्माण करते हैं। क्योंकि अग्नि की सप्त जिह्वाएं हैं। सप्त जिह्वाओं के आधार पर सप्त प्रकार के कोणों वाली यज्ञशाला बनाई जाती है। जिस प्रकार एक वैज्ञानिक जो परमाणुओं का मिलान करना जानता है। वह निर्माणवेत्ता निर्माण करने लगता है और उसी प्रकार का निर्माण करता है। विषैली जो वायु है उसका संचार वायुमण्डल में प्रसारित हो जाए,ऐसा विचार रहता है। इसी प्रकार यज्ञशाला का निर्माण होता है।

चैत्र मास में प्रभु के उपासक देवी यज्ञ

मैं अवैदिकता की चर्चा नहीं करता हमारे यहाँ जो वैदिक साहित्य में प्राप्त होता है उसकी चर्चा करता हूं। जब सप्तकोण की निर्माणशाला बनाई जाती है। यज्ञशाला को दोनों रूपों से परिणत किया गया है। उसमें पश्चिम जो भाग है उसमें लगभग तीन जिह्वा आ जाती है। अहा उनके आधार पर ही उस आसन पर यज्ञमान विराजमान हो करके संकल्प करता है। अग्नि के समीप विराजमान हो करके संकल्पवादी बनता है। यज्ञ का अभिप्राय है,संकल्प। यज्ञ का अभिप्राय है सुगन्धि देना। इस संसार को, दैवी यज्ञ का अभिप्राय है कि जो चैत्र मास होता है,जैसा मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी प्रेरणा दे रहे हैं। इसमें जो देवी यज्ञ होते है। उसमें सप्तकोण की यजशाला का निर्माण होती है और यज्ञमान पत्नी सहित विराजमान होकर के यज्ञ करता है। सबसे प्रथम ज्योति को जागरूक करता है। ज्योति को जागरूक करके उस प्रभु

से याचना करते हुए वह प्रभु की गोद में जाने का प्रयास करता है। परन्तु प्रभु की उपासना करते हुए महत्ता वाली ज्योति को जागरूक करने वाला जो यज्ञमान है वह दैवी यज्ञ करता है। तो वह जो सप्तकोण की यजशाला है उसमें जो सुगन्धि उत्पन्न होती है, उसमें जो तरंगे उत्पन्न होती हैं, वह इस पृथ्वी को प्राप्त हो जाती हैं। प्राप्त होने का अभिप्राय यह कि जो नाना प्रकार की वनस्पतियां इस पृथ्वी पर, वसुन्धरा के गर्भ में शुद्ध रूप से परिपक्व हो जाती हैं। उसमें सुगन्धि प्रदान की जाती है।

यज्ञशाला में ब्रह्म को सुन्दर चुना जाता है। उद्गाता होता है। एक अध्वर्यु होता है, होताजन होंते हैं,जिन्हें ऋत्विज कहते हैं। जो यज्ञशाला में अग्नि प्रदीप्त हो रही है, हमारे यहाँ ऋषि मुनि आचार्य द्वारा राष्ट्र गृहों में यह अग्नि सहस्रों सहस्रों वर्षों से प्रदीप्त होती रही है। इसका अभिप्राय यह कि अखण्ड ज्योति जो अग्नि है यह कदापि यज्ञशाला से शान्त नहीं होनी चाहिए। वह जो यज्ञवेदी है उस यज्ञवेदी का अभिप्राय यही है कि अखंड ज्योति है। अखंड अग्नि गौ घृत को लेकर के,जो सुगन्धि करता है,अशुद्ध परमाणुओं को नष्ट करता है। वातावरण उस ही के द्वारा पवित्र होता है। आज हमें उस यज्ञ के ऊपर प्रायः अनुसन्धान करना चाहिए।

यहाँ वैदिक साहित्य में यज्ञशाला के नाना प्रकार की प्रतिज्ञा आती हैं। जो चतुर्थकोण की यज्ञवेदी है उसमें जो सुगन्धि उत्पन्न होती है वह पार्थिव सूर्य की किरणों का प्राप्त होती है। एक पन्द्रह कोण की यज्ञशाला होती है। उसको हमारे यहाँ गो-मेध यज्ञ कहा जाता है। उसमें जो सुगन्धित, तरंगों की धाराओं का जन्म होता है उनका ध्रुव मण्डल तक प्रायः सम्बन्ध रहता है।

दैवी यज्ञ को विष्णु यज्ञ

मुझे वह समय भली भांति स्मरण आता रहता है हमारे यहाँ महर्षि भारद्वाज आश्रम में पांच प्रकार की यज्ञशाला रहती थीं। उनके यहाँ दैवी यज्ञ को विष्णु यज्ञ कहते थे। विष्णु नाम सूर्य का है गौ मेध याज्ञ अश्वमेध यज्ञ आदि के लिए नाना प्रकार की यज्ञशाला महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ प्राप्त होती थीं। मुझे स्मरण है महर्षि भारद्वाज के यहाँ जो पन्द्रह कोण की यज्ञशाला थी। उसमें वे आहुति देते थे। उससे जो तरंगें उत्पन्न होती थी,उसके साथ में वैज्ञानिक अपनी उड़ान को उड़ान प्रारम्भ कर देते थे। जिस प्रकार योगीजन सूर्य की किरणों के आश्रित हो जाता है, किरणों को ही लेकर के वह अन्तरिक्ष की उड़ान उड़ाने लगता है इसी प्रकार हमारे यहाँ दैवी यज्ञ के सम्बन्ध में भी ऐसा ही कहा गया है। ये जो भौतिक यज्ञ हैं, जैसा महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ नाना प्रकार की यज्ञशालाएं रहती थीं और उन यज्ञशालाओं में आहुति देते, तो उसके ऊपर अनुसन्धान चलता। उन परमाणुओं को एकत्रित किया जाता ,वे ही परमाणु

इस वायु मण्डल को ऊँचा बनाते हैं। प्रकृति को ऊँचा बनाते हैं। क्योंकि प्रकृति को देवी कहा है। वेदों ने इसको देवी कहा है। धेनु कहा है, रेणुका कहा है। काली माँ कहा हैं दुर्गेवेती का है। सोम-धाम-केतु कहा है। इसी को वैष्णवी कहा है। परन्तु इसके नाना प्रकार के रूप रेखाएं और नाना प्रकार के भेदन हैं।

आज मैं उन भेदनों में नहीं जाना चाहता हूँ। विचार केवल यह है कि एक प्रकार का यन्त्र बनाया जाता था। उसे सुगन्धि यन्त्र कहते हैं। उसको यज्ञ कुण्ड भर कहा जाता है। यज्ञ कुण्ड का अभिप्राय यह कि जिसमें घृत की आहुति प्रदान की जाती हैं। ऋषि मुनियों ने ऐसी यज्ञशालाओं का निर्माण क्यों प्रारम्भ किया? हमारे यहाँ त्रिकोण वाली भी होती है और षटकोण की भी होती है। भिन्न भिन्न प्रकार के देवता होते हैं। प्रत्येक यज्ञ का प्रत्येक देवता होता है। जैसे दैवी यज्ञ का देवता गायत्री है। गायत्री जिसे हम इन्द्र कहते हैं,उसी प्रकार विष्णु यज्ञ का देवता शिवोप्राप्त कहा जाता है। और ब्रह्म यज्ञ ह, ब्रह्म यज्ञ का जो देवता है वह देवता आभा गन्धर्व माना गया है। आज हमें इन यज्ञों को विचारना चाहिए। जहाँ सुगन्धि दी जाती हो, दुर्गन्ध का विनाश किया जाता हो। यह है भौतिक यज्ञशाला की रूप रेखा।

यज्ञ का आध्यात्मिक रूप

अब इस का आध्यामिक रूप तुम्हें श्रवण कराए देता हूँ। हमारे यहाँ महर्षि भारद्वाज ही नहीं इससे पूर्व काल में भी सतयुग के काल में एक महर्षि मानकेतु हुए थे राजा मान्धाता के यहाँ वे राजपुरोहित होते थे। उनके यहाँ नित्य यज्ञ होता था। यज्ञ के उपर उनका विचार विनिमय होता रहता था। आध्यात्मिक रूप रेखा निर्माण करते थे। उन्होंने कहा कि हमें यह आत्मा का यज्ञ करना चाहिए। हमें नाना प्रकार की प्रवृत्तियों का यज्ञ करना चाहिए। हमारे इस मानव शरीर में पांच ज्ञान इन्द्रियां, पांच कर्म इन्द्रियां,दस प्राण और मन, बुद्धि, चित, अंहकार है। इनसे नाना प्रकार के विषयों को मानव एकत्रित करता है। इनकी धाराएं हैं। इनके विषय हैं। और इन विषयों को जो एकत्रित करता है,उसका साकल्य बना करके उस हृदय रूपी यज्ञशाला में जो आहुति देना चाहता है,वह आत्मिक यज्ञ कर रहा है। उसको हमारे यहाँ दैवी यज्ञ कहा जाता है। आध्यात्मिक कहलाया गया है। तो यह सर्वोपरि यज्ञ है वह आत्मिक यज्ञ कहलाया गया है। इसके ऊपर मानव को प्रायः विचार विनिमय करना है, विचारशील रहना है। जिसकी विचारधारा को लेकर के मानव सदैव संसार में एक महत्ता की ज्योति को प्राप्त हो जाता है।

आध्यात्मिक यज्ञ का प्रकार

तो आज हमें यज्ञ करना चाहिए, उस यज्ञ के ऊपर अनुसन्धान करना चाहिए। जिस यज्ञ के द्वारा मानव इस प्रकृति और वातावरण को सुन्दर बनाता है। यह जो आध्यात्मिक यज्ञ है यह कैसे किया जाता है। यह प्रश्न प्रत्येक मानव के मस्तिष्क में उत्पन्न होता है। आध्यात्मिक यज्ञ का अभिप्राय है आत्म चेतना को जानना, उसे जागरूक करना। हमारे ऋषि मुनियों ने दो प्रकार के हृदय माने हैं। एक ब्रह्मरन्ध्र को भी हृदय माना है। दूसरा रसना के और कण्ठ के और नाभि के मध्य दोनों के मध्य में है मध्य भाग को भी हृदय कहा जाता है। मस्तिष्क का हृदय और इन दोनों हृदयों का समन्वय होना चाहिए। अब दोनों हृदयों का समन्वय किस प्रकार किया जाता है। वह समन्वय करते इस प्रकार ध्यानावस्थित हो जाओ कि वह जो ओ३म् रूपी धागा है,उस धागे में प्रत्येक इन्द्रियों का विषय पिरोया हुआ होना चाहिए। जब इन्द्रियों का विषय पिरोया हुआ होता है वह एक माला बन जाती है, साकल्य बन जाता है, हृदय रूपी यज्ञशाला में उसकी आहुति दी जाती है। आहुति का अभिप्राय यह कि मन और प्राण ही जगत में, इस प्रकृति के गर्भ में अपना कार्य कर रहे हैं। जहाँ भी दृष्टिपात करो वहीं प्राण और मन ही है। उस मानवीय शरीर में क्या आज हम पृथ्वी के इस माता वसुन्धरा के, देवी के गर्भ में जाते हैं। जितना भी खाद्य है,खनिज है,जितना भी इसमें रस का संचार होता है,विभाजनवाद है,वह सर्वत्र विभाजनवाद विश्वभान मन के द्वारा होता है। और वह मन इस प्रकृति के, देवी के गर्भ में परिणत होता हुआ खनिज और खाद्य को उत्पन्न करता है। वह जो नाना प्रकार का खनिज है जिसके द्वारा राष्ट्र की उन्नति होती है। विशाल से विशाल वैज्ञानिक इस महान् देवी पर अनुसन्धान करना प्रारम्भ कर देते हैं।

सबसे प्रथम यह जो आत्मयाग है। संसार का विभाजनवाद है। जितना भी पृथ्वी के गर्भ में जाओगे,नाना प्रकार की वनस्पतियां वहाँ हैं, नाना प्रकार के रस स्वादन देने वाली वनस्पतियां हैं,परन्तु यह सब मन ही के द्वारा है। प्राण का संसार में विभाजन होता है। परन्तु मन ज्ञान का माध्यम बनकर के आत्मा का प्रतिनिधि बनकर के वह प्राण को अपनी ध्वनियां देता रहता है। अपनी प्रेरणा देता रहता है। यह मन प्रकृति का सबसे सूक्ष्म तत्त्व है। इसीलिए ऋषि मुनियों ने कहा है, विज्ञानवेत्ताओं ने कहा है एक मन को जान लेने के पश्चात् संसार में कोई वस्तु भौतिकवाद में शेष नहीं रह जाती,जिस को मानव न जान सके।

यह जो मन है यह तो नारद है। नारद किस प्रकार? जैसे नारद मुनि तीव्र गति से रमण करने वाले हैं।

उन्हें अहा! यौगिक क्रियाओं के द्वारा और वैज्ञानिक यन्त्रों द्वारा ऋषि मुनि ऊँची उड़ान करते थे। कोई ऋषि मुनि विराजमान हो करके सूर्य मण्डल की कल्पना कर रहा है। कल्पना ही नहीं उसको साक्षात्कार, दृष्टिपात कर लेता है। वह देवी की अनुपम कृपा है। क्योंकि देवी के नाना प्रकार के स्तम्भ हैं। तो हमें यज्ञ करना चाहिए। यज्ञ का अभिप्राय है कि जहाँ साकल्य अग्नि में प्रदान किया जाता है वहाँ विचार भी पवित्र और ऊँचा होना चाहिए। जब ऊँचा विचार होगा, ऊँचा साकल्य होगा, ऊँची महत्ता होगी,उतना ही यह राष्ट्र और समाज ऊँचा बनता चला जाएगा। यहाँ यौगिकवाद भी ऊँचा बनता चला जाएगा।

सात प्रकार का अन्न

आज हमें उस प्रकृति के गर्भ में जाना है,इस वसुन्धरा के गर्भ में नाना प्रकार के खाद्य और खनिज उत्पन्न होते हैं। वह प्रभु की कैसी विचित्रता है। माँ! तू संसार में कैसी वस्तु प्रदान करती है। जो नाना अन्न हैं,जिन्हें खाद्य कहते हैं,ये अन्न सात प्रकार के कहलाए गए हैं। एक अन्न वह है जो सबका साझा अन्न हैं जिस अन्न को माता अपने भोजनालय में तपाती हैं। अग्नि में तपायमान कर देती है, वह सबका साझा अन्न होता है,उसी का दूसरा भाग जो अन्न है वह पशुओं को प्रदान कर दिया जाता है मेरे प्यारे प्रभु की कितनी विचित्रता है। हे रचनाकार! तू कितना वैज्ञानिक है। जैसा जिसका उदर होता है उस मेरे प्यारे प्रभु की। वह जो यज्ञ हो रहा है वह कितना विशाल है। जब हम यह विचारने लगने हैं।

सबका साझा अन्न

प्रभु ने संसार में सात प्रकार के अन्न की रचना की है, सात प्रकार के खाद्य दे दिए हैं। प्राणीमात्र के लिए। एक अन्न तो सबका साझा है दूसरा अन्न पशुओं को प्रदान कर दिया, पशु पाकर के उसको दुग्ध देते हैं। घृत प्रदान करते हैं उससे याज्ञिक पुरुष यज्ञ किया करते हैं।

तृतीय अन्न

इसी प्रकार तृतीय अन्न हूत कहलाया गया है हूत का अभिप्राय आहुति देना है। हे ब्राह्मणों, हे यज्ञमान! तू आहुति दे। हे यज्ञमान! आहुति के साथ-साथ तेरे विचारों की गति सूर्य मण्डल में जाने वाली हो। ऐसा वेद का पाठ कह रहा है। वेद का ऋषि कह रहा है। वहाँ तक जाने का तुम प्रयास करो। इस की उड़ान होनी चाहिए। राजा के राष्ट्र में भी यज्ञमान की ऊँची उड़ान होनी चाहिए। इस पृथ्वी से लेकर के सूर्य मण्डल तक रमण करने वाला हो।

आत्मा

सूर्य क्या है? सूर्य अग्नि प्रधान एक गृह कहलाया गया है। जिसमें अग्नि तत्त्व प्रधान है।जो आत्मवेत्ता पुरुष होते हैं,वह जानते हैं कि उस आत्मा को अग्नि कदापि शान्त नहीं कर सकती,उस सूक्ष्म शरीर को अग्नि भी अपने में ग्रहण नहीं कर सकती। तो आज हमारी इतनी उड़ान इस यज्ञवेदी पर होनी चाहिए। हमारे ऋषि मुनियों ने सात प्रकार के अन्न की विवेचना की है। हूत होता है,जो देवताओं को प्रदान किया जाता है। तृतीय अन्न जिसमें देवताओं की पूजा होती है। देवता कौन है। देवता यह प्रकृति है। देवता वह कहलाया गया है जैसे जल,अग्नि,पृथ्वी,वायु,आकाश है, पंच महाभूत हैं, जो ये देवता कहलाए गए हैं। इन देवताओं का पूजन होता है, इन देवताओं को अन्न प्रदान किया जाता है। जब यज्ञमान आहुति देता है,उसका दूत कौन है? वह अग्नि देवताओं का दूत बन करके प्रत्येक देवता को सुगन्धि प्रदान कर देती है। तो उसमें बल और शक्ति प्रदान हो जाती है,उस शक्ति को प्रदान करता हुआ मानव अपने जीवन को अग्रणीय बनाता चला जाता है।

तो हूत और प्रहूत कहते हैं,पुरोहित की सेवा करने को। पुरोहित कौन है? जो यज्ञमान को पराविद्या प्रदान करते हैं। और ये कहते हैं कि हे राजन्! आज तू पराविद्या को धारण कर। हे यज्ञमान! तू पराविद्या को ले। वह चैतन्य देवता कहा जाता है, वह बुद्धिमान है। जिनको ब्राह्मणजन कहा जाता है। उनको पुरोहित कहा जाता है।

वह प्रहूत कहलाते हैं। उनको दिया जाता है। वह चतुर्थ प्रकार का अन्न कहलाया गया है। वह जो अन्न है वह अन्न जो ब्राह्मण को दिया जाए। विद्या भी इसी के गर्भ में होती है। क्योंकि बुद्धिमान को दिया हुआ जो पदार्थ है, द्रव्य है वह प्रहूत कहलाता है। प्रहूत इसलिए कहलाया है कि वह पुरोहित बनकर के इस संसार को सुन्दर बनाता है और यज्ञमान को ऊँचा बनाता है।

परमात्मा ही यथार्थ में पुरोहित

राजा घोषणा करता है वैदिक साहित्य के आधार पर, वह यज्ञमान को पत्नी सहित ऊँचा बनाने का प्रयास करता है। वह पुरोहित कहलाया गया है। जो पराविद्या प्रदान करने वाला है। वास्तव में हमारे वैदिक साहित्य में पुरोहित नाम तो प्रभु का ही माना गया है। पुरोहित बनकर के हमें ऊँची-ऊँची प्रेरणा दे रहा है। उसको पुरोहित कहा गया है। हे प्रभु! तू कैसा पुरोहित है। यह चतुर्थ प्रकार का अन्न है।

तीन प्रकार का और अन्न उस देवी ने, उस देव ने, उस ममतामयी ने जो आत्मा को प्रदान कर दिये।

उस अन्न का अभिप्राय यह है कि हम नेत्रों से उस रूप का भरण करते हैं। घ्राण के द्वारा सुगन्ध, दुर्गन्ध का भरण करते हैं, श्रोत्रों के द्वारा शब्दों का भरण करते हैं। यह आत्मा का अन्न है। जितना यह सुन्दर पवित्र अन्न होगा,उतना ही आत्मा बलिष्ठ होगा। जितना नेत्रों से शुद्ध पवित्र और भद्र दृष्टि हमारी रहेगी,उतना ही आत्मा का बल बुद्धि को प्राप्त होता रहेगा,जितना इस घ्राण से हम सुगन्ध का पान करते रहेंगे । प्राण की गति को जानते रहेंगे,उतना ही आत्मा बलिष्ठ और बलवान होता रहेगा।

पवित्र अन्न ग्राह्यता

इस आत्मा के तीन प्रकार के अन्न हैं। जो प्रभु ने दृष्टि के प्रारम्भ में इस आत्मा को प्रदान किए थे। ये जो तीन प्रकार के अन्न हैं वे प्रारब्ध के आधार पर प्राप्त होते हैं। आज हम इनके द्वारा अपनी आत्मा को ऊँचा बनाना चाहिए। आज हमें नेत्रों से रूप का दिग्दर्शन करते हैं, एक पुत्री का दिग्दर्शन कर रहे हैं उसके सौन्दर्य,उसकी प्रभु की रचना को जब दृष्टिपात करते हैं तो यह आत्मा का बल ऊर्ध्व बनता है।

काम से दुषित दृष्टि होने पर आयु क्षीण

यदि उस कन्या के द्वारा हमारे दूषित विचार हो जाते हैं, यदि दूषित दृष्टि बन जाती है तो उस से आयु सूक्ष्म बन जाती है। दुर्विचार आते ही उसकी मानवीयता, उसका आध्यात्मिक बल सूक्ष्म होना प्रारम्भ हो जाता है। मेरे प्यारे ऋषिवर! विचार क्या कि हमें ये दैवी यज्ञ करने चाहिए। यह सात प्रकार का अन्न है जो प्रभु ने उस ममतामयी माँ ने सृष्टि के प्रारम्भ में अपने पुत्रों! को प्रदान कर दिया था। वह जो चैतन्य देवता है वही तो मेरी माँ है, वही तो मेरी माँ वसुन्धरा है जिसके द्वारा हमारा कल्याण होता है। तो हम ज्योति को पान करने का प्रयास करें। उस यज्ञ को करें वह जो सप्त जिह्वा यज्ञ है जो प्रकृति को ऊँचा बनाता है, सुगन्ध को देता है, मन्दता को नहीं देता, परन्तु वह बुद्धि को ऊर्ध्व बनाता है, वह यज्ञ हमारे मध्य में होना चाहिए। उस यज्ञ के द्वारा हम अपने जीवन, राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाते रहते हैं।

यज्ञ की अग्नि

यहाँ वेद कहता है प्रत्येक गृह में याग होने चाहिए और यज्ञ की जो अग्नि है, ज्योति है यह गृह आश्रम से कदापि शान्त नहीं होनी चाहिए। यह अपनी ज्योति ऊर्ध्व को प्राप्त होती रहे। जिस प्रकार सूर्य अपने वेग में रमण करता है, अपना प्रकाश देने वाला है और उस प्रकाश में प्रत्येक मानव अपने कर्त्तव्य का पालन देने वाला है और उस प्रकाश में प्रत्येक मानव अपने कर्त्तव्य का पालन करता चला जाता है। तो

हम आध्यात्मिक यज्ञ को करने वाले बनें। यह जो तीन प्रकार का अन्न है शाब्दिक अन्न, रूप अन्न, सुगन्ध अन्न यह जो नाना प्रकार के परमाणु आते और जाते हैं, रमण करते हैं, उनका आवागमन लगा हुआ है अहा, उसको हमें जानना चाहिए। उन्हीं परमाणुओं को जानते हुए अपनी सुन्दर यज्ञवेदी पर विराजमान होकर के उन परमाणुओं पर अनुसन्धान होना चाहिए। इसमें विस्तृतता होनी चाहिए। महत्ता होनी चाहिए।

इस माँ प्रकृति के कितने स्तम्भ हैं? यह प्रभु का जो भवन है यह जो मानव राष्ट्र है, प्रभु का जो जगत् है इसके कितने स्तम्भ हैं? हमारे यहाँ आध्यात्मिक यज्ञ होने चाहिए। आध्यात्मिक यज्ञ उसे कहते हैं कि आत्मा के इन पांच ज्ञान इन्द्रियां, पांच कर्म इन्द्रियां, दस प्राण, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार इनका सबका साकल्य बना करके वह जो हृदय स्थल है, हृदय रूपी जो यज्ञवेदी है, यह एकाग्र हो करके उस वेदी में आहुति देनी चाहिए। उस आहुति देने का नाम ध्यानावस्थित होना है। ध्यानावस्थित हो करके हम अपने को जैसे बालक माता को प्राप्त हो जाता है,माता के सामने अपने को समर्पित कर देता है इसी प्रकार ध्यानावस्थित हो करके हम अपने को जब प्रभु को समर्पित कर देते हैं उस समय वह जो आत्मिक विज्ञान है, आत्मिक जो धाराएं हैं आज उसमें जो ज्ञान-विज्ञान है उसको हम स्पष्टीकरण कर लेते हैं। उनको हम योगी बन करके हमारी उड़ान पृथ्वी तक नहीं,चन्द्र लोकों तक भी नहीं, मंगल क्या सूर्य क्या? बृहस्पति और गन्धर्व लोकों को जानने वाले बन जाते हैं। (प्रवचन सन्दर्भ 18-०3-1972)

मोक्ष प्राप्ति के लिए विज्ञान के पन्द्रह स्तम्भ 72.03.19

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है। क्योंकि जिनका यह जगत आज हमें दृष्टिपात आ रहा है, यह उस परमपिता परमात्मा की एक आभा है। यह उसका एक महान विज्ञानमय स्वरूप जगत माना गया है। तो बेटा! आज हम उस रचयिता है। अथवा उस जगत का निर्माण करने वाला निर्माणवेत्ता है। हमें अपने जीवन में उस निर्माणवेत्ता को धारण करते हुए इस आत्मा की पिपासा को शान्त करने का प्रयास करना चाहिए।

रुद्र रूप परमपिता

बेटा! जब हम दार्शनिक विचारों में जाते हैं तो वेदों का वह साहित्य हमारे स्मरण आने लगता है जिसमें परमपिता परमात्मा की आभा का प्रायः वर्णन किया गया है। अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान की आभा का दिग्दर्शन होता है। बेटा! आज मैं कोई विशेष चर्चा तुम्हें नहीं प्रकट करूंगा। क्योंकि आज तो मैं सूक्ष्म सी माला को धारण कराने आया हूँ। प्रत्येक मानव को उस माला को धारण कर लेना चाहिए। उस माला को रूदाक्ष कहा गया है। मानो वह जो रुद्र प्रभु है जो पामरों को रूलाने वाला है, अपराधियों को, पापाचारियों को रूलाने वाला है, उसे रुद्र कहा जाता है। मुनिवरों! देखो, उस रुद्रमय महिमा का गुणगान वाले रुद्राक्ष की माला को धारण करता है। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने कहा है कि हम जब माला को धारण करते हैं, तो हमारे हृदय में एक उल्लास उत्पन्न होता है। मानो एक ज्योति जागरूक होने लगती है। हमारा अन्तरात्मा यह उच्चारण करने लगता है कि क्या हम परमपिता परमात्मा की आभा का दिग्दर्शन करने के लिए उस आभूषण को अपनाने का प्रयास किया करें। जिस आभूषण को अपना करके हम प्रभु के द्वार पर जा सकते हैं। आओ मेरे प्यारे ऋषिवर! वह जो मेरा प्यारा प्रभु है जो रचयिता है, निर्माणवेत्ता है आज हम उस निर्माणवेत्ता की शरण में जाएं, जो ममतामय है। जो संसार को आभायित करने वाला है। यह आत्मा इस जगत में एक महत्ता को धारण करके इस संसार सागर से पार होने का प्रयास कर रहा है।

तो आओ, मेरे प्यारे ऋषिवर! मुझे वह साहित्य भली भान्ति स्मरण आ रहा है। आज मैं तुम्हें रूद्राक्ष की

माला को धारण कराने आया हूँ। जो मुनिवरों! अपराधियों को रूलाने वाला है। संसार में अपराधी कौन होता है? बेटा! वह मानव अपराधी होता है जो अपनी अन्तरात्मा का हनन करता है। अन्तरात्मा के विपरीत कर्म करता है। हृदय कुछ प्रेरणा दे रहा है, मानव कुछ कर्म कर रहा है। तो वह आत्मा के विरूद्ध है, वह आत्मा का हनन कर रहा है। मुनिवरों! जिस प्रकार माता का प्रिय पुत्र माता की आज्ञा का पालन नही करता तो वह माता के ऋणों से उत्ऋण नही होता। परन्तु उस की सद्गती होनी चाहिए, सद्विचार होने चाहिएं, उन सत्य विचारों से ही माता की आज्ञा का पालन करने वाला जो प्राणी है, अथवा पुत्र है वह सदैव इस संसार से उदासीन रहता है। उदासीन कहा जाता हैं। वास्तव में प्रभु के राष्ट्र में कौन अपराधी है? प्रभु के राष्ट्र में वही मानव बेटा! पापाचारों में रमण करता है जो मानव परमात्मा की आज्ञा का पालन नहीं करता। अन्तरात्मा की प्रेरणा को स्वीकार नहीं करता।

हमारे यहाँ परम्परागतों में बेटा! जब ऋषि मुनियों का विचार विनिमय होता था। एक समय मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से एक वाक्य कहा कि हे प्रभु! संसार में पापी कौन होता है? उस समय मेरे प्यारे! देव ने उत्तर दिया, हे वत्स! वे मानव वे माताएं वे पुत्रियां वे ब्रह्मचारी अपराधी होते हैं जो अपनी अन्तरात्मा की प्रेरणा को हनन कर देते हैं, अन्तरात्मा कुछ कह रहा है मानव का कर्म कुछ रहता है। तो वह अपनी आत्मा को हनन कर रहा है। क्योंकि संसार में वेद के पठन पाठन करने वाला ही विशेषज्ञ नहीं होता, वही धर्मज्ञ नहीं होता संसार में वह मानव धर्मज्ञ होता है। जो इस संसार में अपनी अन्तरात्मा के अनुकूल विचरण करता है। मेरे प्यारे ऋषिवर! मेरा प्यारा प्रभु कितना महान है? कितनी प्रेरणा देने वाला है? संसार का धर्म और मानवतव का धारण करा रहा हूँ। मैंने यह वाक्य पूर्व काल में भी प्रकट किया। आज भी उस माला को तुम्हें धारण करा दूं और वह क्या है? श्रवण कराने के लिए मैं उसको धारण और उसकी विवेचना नहीं करूंगा केवल संक्षिप्त विवेचना चाहता हूँ।

मुनिवरों! देखो, एक समय राजा जनक के यहाँ महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज और भी आदि ऋषि मुनियों का समाज एकत्रित था। क्योंकि वह ब्रह्मवेत्ताओं का समाज था ब्रह्म विचार हो रहा था। ब्रह्म विचारकों ने महाराजा जनक के पुरोहित अश्वल से कुछ प्रश्न किए। उसके पश्चात चाक्राणि गार्गी उपस्थित हो गई। जो ऋषि मुनियों में प्रभावशाली और ब्रह्मवादिनी थीं। ब्रह्म को अपने में और अपने को ब्रह्म में जो स्वीकार करता है, वही ब्रह्मवेत्ता कहलाया गया है। मुनिवरों! देखो, माता गार्गी ने उपस्थित हो करके ब्राह्मणों से कहा हे ब्रह्मवेत्ताओं! हे ब्राह्मणों! अब यदि तुम्हारी आज्ञा हो तो मैं भी इस ब्रह्मवेत्ता से दो प्रश्न करना चाहती हूँ। उस समय उन ब्राह्मणों से एक स्वर से अवश्य कीजिए। याज्ञवल्क्य मुनि बोले,

देवी! तुम प्रश्न करो यथाशक्ति मैं उसका उत्तर दे सकूंगा। उन्होंने कहा तो मेरा भगवन! प्रश्न यह है कि यह जो जगत है, जो आज मुझे दृष्टिपात आ रहा है, यह ब्रह्म समाज है, यह मानव राष्ट्र है, और राष्ट्र में भी नाना प्रकार के भेदन हैं, नाना प्रकार के प्राणी हैं। परन्तु यह जो जगत मुझे दृष्टिपात आ रहा है, यह नाना प्रकार की वनस्पतियों वाला जगत नाना प्रकार की आभाओं वाला जगत है जिसमें नाना प्रकार के वृक्ष स्थावर, जंगम, अंडज और उद्भिज्ज जो चारों प्रकार की सृष्टियां हैं, मानो यह जितना भी जगत मुझे दृष्टिपात आ रहा है, क्या माता वसुन्धरा के गर्भ में जो खनिज है या खाद्य है यह सब किसमें प्रतिष्ठित रहता है? इसकी प्रतिष्ठा क्या है? उस समय जब ऐसा प्रश्न किया गया तो मुनिवरों! ऋषि ने कहाँ हे ऋषि कन्या! यह जो जगत है, जितना तुम्हें यह दृष्टिपात आ रहा है, इसकी जो प्रतिष्ठा है इस पृथ्वी में है, इस पृथ्वी को हमारे यहाँ वसुन्धरा कहते हैं। यह वसुन्धरा इसलिए है क्योंकि इस में हम सब वशीभूत रहते हैं। अहा! जो माता के गर्भ में वशीभूत रहता है उसी माता को वसुन्धरा कहा जाता है। इसके नाना प्रकार के पर्यायवाची हैं जैसे वसुन्धरा है, गो है, अहिल्या है, रेवनी है नाना प्रकार के रूपों में इसका प्रतिपादन किया गया है। परन्तु यहाँ केवल वसुन्धरा का अभिप्राय है जिसमें हम सब वशीभूत रहते हैं। उसी का नाम बेटा! वसुन्धरा है। इसी वसुन्धरा के गर्भ में ही यह सर्वत्र जगत जो दृष्टिपात आता है कि प्रतिष्ठा मानी जाती है।

वसुन्धरा की प्रतिष्ठा आपो ज्योति में

उस समय जब ऋषि ने यह उत्तर दिया तो चाक्राणि ने कहा भगवन! यह जो पृथ्वी है इसकी प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहा जो पृथ्वी है जो मानो अनेक रूपों से रमण करती रहती है संसार को स्थिर किए रहती है जिस प्रकार माता के गर्भ स्थिल में जब शिशु होता है तो माता उसे स्थिर किए भ्रमण करती है परन्तु उस शिशु की माता के गर्भ में रहती है। इसी प्रकार मुनिवरों! यह जो पृथ्वी है यह अपनी इस सृष्टि की, रचना को अपने में धारण किए रहती है। इस पृथ्वी की जो प्रतिष्ठा है यह मानो जल ज्योति में ओत प्रोत हो जाती है, जिसे आपो ज्योति कहा जाता है। जिस ज्योति में यह संलग्न हो जाती है, प्रतिष्ठित हो जाती है, मेरे प्यारे ऋषिवर! वह आपः है, वह आपः कहलाया गया है। नाना प्रकार की वनस्पतियों वाली जो वसुन्धरा है, मानो पृथ्वी है यही तो जल में ओत प्रोत हो जाती है। जल में ही इसकी प्रतिष्ठा मानी जाती है।

उस समय जब ऋषि ने यह उत्तर दिया तो ऋषि कन्या बोली, कि प्रभु! यह जो आपो ज्योति है। यह

क्या है? उन्होंने कहा यह जो आपो ज्योति है, यह अमृत है, यही सोम कहलाया गया है। यह जब समुद्रों में ओत प्रोत रहता है तब मानो चन्द्रमा तक इसकी तरंगें जाती हैं। यह आपो ज्योति है जिसको वेद ने अमृत कहा है। कैसा अमृत है? माता के गर्भस्थल में जब जरायुज होता है यही तो अमृत है जो चन्द्रमा की कान्ति को माता की नस नाड़ियों के द्वारा मुनिवरों! देखो, उस शिशु को प्रदान करता है, यही तो सर्वत्र विज्ञान है। प्राण इसी के आश्रित रहता है। क्योंकि आपो ज्योति है। आपो नाम जल का है। इस जल में जो विद्युत माँ के रूप में है। मानो वह जो ज्योति है वह रमण कर रही है। उसी के कारण यह जल सोम कहलाया गया है। यदि बेटा! जल में ज्योति नहीं होती तो यह सोम नही बन सकता था। मेरे प्यारे ऋषिवर! जिस प्रकार मानव लाता है, चेतनावादी कहलाया जाता है। और जिस समय यह ज्योति इस शरीर से पृथक हो जाती है, उस समय यह मानवीय शरीर मृतक बन जाता है। इसको शव कहते हैं। इसे उस अग्नि में प्रविष्ट कर देते हैं जो लोक में प्रचलित अग्नि उस ज्योति रहित को निगल जाती है, यही ज्योति का सबसे उत्तम लाभ है संसार में। इसलिए यज्ञमय ज्योति जागरूक होनी चाहिए। क्योंकि यह ज्योति रहित को निगलती चली जाती है। मेरे देव की महिमा कितनी विचित्र है? कितना महान वह वैज्ञानिक है। बेटा! आज मैं उस विज्ञानवेत्ता की चर्चा अधिक नहीं करूंगा। केवल संक्षिप्त परिचय देना हमारा कर्तव्य है। वह परिचय क्या है कि यह आपोज्योति अमृतमय कहलाई जाती है, इसी में पृथ्वी ओत प्रोत रहती है। इस पृथ्वी की जो प्रतिष्ठा है यह मानो इस आपो में रहती है, जल में रहती है। जल ही इसका गृह माना गया है।

उस समय बेटा! ऋषि कन्या बोली कि प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ कि यह जो ज्योति है इसकी प्रतिष्ठा क्या है, यह किसमें ओत प्रोत हो जाती है। उस समय उन्होंने कहा है ऋषि कन्ये! यह जो आपो ज्योति है यह अग्नि में प्रतिष्ठित हो जाती है। यह अग्नि ही है जो लोक में रमण करती है जो लोक इस पृथ्वी से लेकर के द्यौ लोक तक अपना प्रकाश करती रहती है। यही द्यौ लोक में रमण करती रहती है। हमारे यहाँ बेटा! मैंने बहुत पूर्व काल में कहा कि अग्नि की नाना प्रकार की धाराएं होती हैं, अग्नि के नाना प्रकार के स्वरूपों में रमण करने वाला जो प्राणी होता है, अग्नि की पूजा करता है। हे अग्नि! तुझे वेद ने अग्निवेतु कहा है। देवताओं का दूत कहा है। जब संसार में देवी यज्ञ होता है तू ही उस सप्त कोण की यज्ञशाला में प्रदीप्त रहती है तू ही है जो नाना प्रकार के साकल्प को लेकर के साकल्य के साथ में विचार को लेकर के, साकल्य के विचार के साथ में मानव के चरित्र को लेकर के तू इस संसार में प्रसारण कर देता है। द्यौ लोक तक मानव का चित्रण किया जाता है। एक विज्ञानवेत्ता है, बेटा! वह चित्रण कर रहा

है मानो इस अग्नि की धाराओं के ऊपर विराजमान हो करके बेटा! उस अग्नि की धारा को विद्युत कहते हैं।

क्योंकि अग्नि का नाम विद्युत है। इसको अभादकेतु भी कहा है, द्यौ अग्नि भी कहा है। द्यौ भी कहते हैं। बेटा! जब शब्द इसके ऊपर विराजमान हो जाता है तो शब्द व्यापक बन जाता है, और मानव का चित्र मुनिवरों! देखो, वह इस अग्नि के ऊपर विश्राम करता है, तो चित्रावली संसार में ओत प्रोत हो जाती है। मेरे प्यारे ऋषिवर! ऐसा ऋषिजन कहते हैं। कि जब मानव श्वांस लेता है, एक श्वांस के साथ में जितना मानव का यह शरीर है इसी के आकार का उन परमाणुओं में सूक्ष्म शरीर का निर्माण हो जाता है। और वह जो निर्माण किया हुआ निर्माण हुआ जो मानो चित्र है वही मुनिवरों! देखो, विद्युत माँ के ऊपर सवार होकर के, अग्नि के ऊपर सवार हो कर के, बेटा! उस चित्र की जो धाराएं हैं, लगभग एक क्षण समय में अरबों खरबों तरंगें उत्पन्न हो जाती हैं, उसकी इतनी गति होती है। उसी के आधार पर विज्ञानवेत्ताओं ने, हमारे ऋषि मुनियों ने ऐसा कहा है कि वही एक धारा है जो मुनिवरों! संसार में चित्रावलियों का निर्माण कर देती है। एक विज्ञानवेत्ता नाना प्रकार की धातुओं को एकत्रित करके एक चित्र बना देता है। मुझे बेटा! वह समय भली भान्ति स्मरण है जब महाभारत के काल में मुनिवरों! देखो, संजय को भगवान कृष्ण ने एक यन्त्र दिया था। और वह यन्त्र कैसा था कि महाभारत का जो संग्राम था मानो उसका चित्रण उस यन्त्र में आ रहा था। वही यन्त्र था बेटा! जो महाराजा धृतराष्ट्र को संग्राम की सब वार्ता प्रकट करा रहा था। एक एक कण कण में इस अग्नि की धाराओं में इस संसार का सूक्ष्म चित्रण रहता है। सूक्ष्म रूपों से परमाणु विचरण करता रहता है। वही परमाणुवाद मुनिवरों! देखो, वायु में, अन्तरिक्ष में ओत प्रोत रहता है। इसीलिए इन परमाणुओं से इस यन्त्र का निर्माण होता है। मानो उन्हीं परमाणुओं से यह भरण हो रहा है।

मेरे प्यारे ऋषिवर! मैं अधिक चर्चा प्रकट नहीं चाहता हूँ। मुझे स्मरण आता रहता है एक समय बेटा! मैं अपने आसन पर विराजमान था। महाराजा अश्वपति के पुत्र लोकी क्रेत केतु और महात्मा भुञ्जु मुनि महाराज दोनों ऋषिवर तब मेरे द्वार पर आए, आ करके उन्होंने हम से कहा कि भगवन! हमने एक यन्त्र बनाया है। उस यन्त्र में यह विशेषता थी कि मानव एक आसन पर विराजमान है तो लगभग दो पहर तक, उन दो पहरों में मुनिवरों! देखो, उनका चित्रण उस आसन पर ज्यों का त्यों स्थिर रहता था वह यन्त्र इस प्रकार का था। यदि दो पहर के पश्चात भी हम उस मानव का चित्रण लेना चाहते तो उस मानव का ज्यों का त्यों चित्र प्रसारित हो जाता था तो मेरे प्यारे ऋषिवर! जब हमने उसको दृष्टिपात

किया तो जब राजकुमार अपने गृह को चले गए तो उनका ज्यों का त्यों चित्र आ गया उसमें। परिणाम क्या? मुनिवरों! देखो, जिस आसन पर मानव रहता है उस आसन पर उसकी सूक्ष्म धाराएं, उसकी सूक्ष्म तरंगें अग्नि के ऊपर विश्राम करती रहती हैं। अग्नि की तरंगों में ओत प्रोत रहती हैं। मेरे प्यारे ऋषिवर! मैं एक वैज्ञानिक क्षेत्र में जाना नहीं चाहता हूँ। तो मैं केवल यह उच्चारण करना चाहता हूँ कि इस अग्नि की प्रतिष्ठा क्या है? बेटा! अग्नि है। संसार में अग्नि की कितनी धाराएं हैं? मैंने इससे पूर्व शब्दों में कहा है कि अग्नि का कितना व्यापक रूप है? मुनिवरों! अग्नि की स्थूल रूप से लगभग २८४ प्रकार की धाराएं होती हैं। और वह जो २८४ प्रकार की २८४वीं धारा है। उसमें से ९९ प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। वह जो ९९ वीं धारा है उसमें से लगभग मुनिवरों! देखो, ७२ धाराओं का जन्म होता है। और ७२वीं जो धारा है उसमें १०१ धाराओं का जन्म चला रहा है परमाणुवाद गति कर रहा है। मेरे प्यारे ऋषिवर! यही अग्नि आवत रहती है।

अग्नि की प्रतिष्ठा वायु में

उस समय चाक्राणि बोली कि प्रभु! वह तो मैंने जान लिया। परन्तु मैं यह जानना चाहती हूँ कि यह जो अग्नि है इसकी प्रतिष्ठा क्या है? प्रभु! यह किसमें ओत प्रोत हो जाती है। उन्होंने कहा कि इस अग्नि की जो प्रतिष्ठा है वह वायु है, यह वायु में ओत प्रोत हो जाती है। वायु की भी इतनी ही प्रकार की तंरगें होती हैं। जो वायु इसमें सूक्ष्म परमाणुओं को लेकर के उड़ान उड़ती रहती है अग्नि भी इसमें ओत प्रोत हो जाती है। क्योंकि जहाँ वायु नहीं होता वहाँ अग्नि ही इस वायु प्रतिष्ठित रहती है। अहा! अग्नि की माँ यह वायु मानी गई है। यही उसका गर्भाशय माना जाता है। मेरे प्यारे ऋषिवर! इस वायु में नाना प्रकार की तंरगें रहती हैं। यह वायु ही है जिस वायु की और अग्नि को सहकारिता से शब्द की गति उर्ध्व हो जाती है। शब्द की गति तीव्र बन जाती है। मेरे प्यारे ऋषिवर! इससे यह सिद्ध होता है, विचार आता है कि वायु की तंरगों में यह अग्नि ओत प्रोत रहती है। मानो विद्युत ओत प्रोत रहती है। इसको वेद ने विद्युत आभा कहा है, सोमभाम केतु कहा है। बेटा! आज हम वायु के ऊपर अनुसन्धान करते हुए चलें।

वायु की प्रतिष्ठा अन्तरिक्ष में

उस समय चाक्राणि बोली कि प्रभु! में यह जानना चाहती हूँ कि यह जो वायु है इसकी प्रतिष्ठा क्या है? यह किसमें प्रतिष्ठित हो जाती है? उन्होंने कहा की यह जो वायु है इस वायु की प्रतिष्ठा यह अन्तरिक्ष है, अन्तरिक्ष में यह ओत प्रोत हो जाती है। अन्तरिक्ष में ही शब्द ओत प्रोत हो जाते है। बेटा! अन्तरिक्ष में

यह एक सूक्ष्म रूप धारण करके ओत प्रोत रहते हैं। मेरे प्यारे ऋषिवर! अन्तरिक्ष में वायु का कोई महत्व नहीं होता। अग्नि का, पृथ्वी का संसार में कोई अस्तित्व नहीं होता। क्योंकि वह तो रूपान्तर किया हुआ जगत उसमें ओत प्रोत रहता है। बेटा! आज उसका रूपान्तर, उस जगत का दिग्दर्शन करने का नाम अन्तरिक्ष कहा गया है। बेटा! और जिस वस्तु का रूपान्तर हो जाता है। स्थूल से सूक्ष्म बन जाती है उसकी प्रतिष्ठा अन्तरिक्ष माना गया है। अहा! उसी में यह प्राणी, लोक लोकान्तर प्रायः विचारण करते रहते है।

मेरे प्यारे ऋषिवर! चाक्राणि बोली कि प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ कि यह अन्तरिक्ष की प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहा कि यह जो अन्तरिक्ष है, यह महत्तत्व में ओत प्रोत हो जाता है। महत्तत्व ही मानो इस एक मूल रूप कहलाया जाता है। महत्तत्व में यह अन्तरिक्ष भी ओत प्रोत हो जाता है। इसका अपना कोई अस्तित्व नहीं होता। यह इसमें प्रतिष्ठित हो जाता है। यह जो महत्तत्व है यही तो इस जगत का एक मूल आधार कहलाया गया है। यही इन मनकों को धारण करने वाला है। मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हमें इसको विचार विनिमय करना चाहिए। अनुसन्धान करना चाहिए। अनुसन्धार वेत्ताओं ने, वैज्ञानिकों ने कहा कि यह जो महत्तत्व है यही इस प्रकृति के चक्र को चला रहा है, गतिशील बना रहा है। आज हमें उस प्रकृति के गतीशील जगत रूपी महत्तत्व को जानना चाहिए, जो शून्य को चेतन बना रहा है, गति दे रहा है, लगातार गति दे रहा है। उस पर हमें बारम्बार विचार विनिमय करना चाहिए।

महततव सूर्य लोकों में प्रतिष्ठित होता

मेरे प्यारे ऋषिवर! चाक्राणि ने कहा प्रभु! मैं जानना चाहती हूँ कि यह महत्तत्व किसमें ओत प्रोत रहता है? उन्होंने कहा कि यह जो महत्ततव है यह सूर्य लोकों में ओत प्रोत हो जाता है। क्योंकि सूर्य लोक ही ऐसे लोक हैं जिसमें महत्तत्व भी प्रतिष्ठित हो जाते हैं, उसी की आभा से यह जगत अपना कार्य कर रहा है। निरन्तर गति से भ्रमण हो रहा है, गतिशील हो रहा है। यह जगत मानो सूर्य लोकों में इसकी प्रतिष्ठा रहती है।

उस समय चाक्राणि गार्गी ने कहा, भगवन! इन सूर्य लोकों की प्रतिष्ठा क्या है? उस समय ऋषि ने कहा, हे देवी! इन सूर्य लोकों की प्रतिष्ठा यह चन्द्र मण्डल हैं। क्योंकि चन्द्रमा इस के प्रकाश से प्रकाशित होता है। इसकी आभा से आभायित होता है इसीलिए इसकी प्रतिष्ठा इसमें मानी जाती है। मेरे प्यारे ऋषिवर! ये जो चन्द्र मण्डल हैं ये ग्रह कहलाए जाते हैं। इसमें मानव परम्परागतों से भ्रमण करता चला आया है। जिन लोकों में यह उपग्रह हैं ये ग्रह कहलाए जाते हैं। ग्रह का अभिप्राय है जिस लोक में प्राणी

विचरण करते हैं। जिसमें गृह का निर्माण हो सकता हो उसी को ग्रह कहा जाता है। जैसे चन्द्र ग्रह है, उसी प्रकार मङ्गल ग्रह है। मैंने बहुत पूर्व काल में कहा है कि यह जो चन्द्र मण्डल है, मङ्गल जो ग्रह है पार्थिव तत्त्व वाला प्राणी वहाँ विचरण कर सकता है जैसे पृथ्वी पर प्राणी रहते हैं, इसी प्रकार मङ्गल पर प्राणी रहते हैं, जैसे मङ्गल पर इसी प्रकार आरूणि मण्डल पर भी रहते हैं, परन्तु यह जो चन्द्र मण्डल है, इसमें जल और वायु तत्त्व प्रधान प्राणी विचरण करते हैं। परन्तु उनके वहाँ गृह होते है सुन्दर गृह होते हैं। मेरे प्यारे महानन्द जी! ने मुझे कई काल में प्रकट करते हुए कहा कि आधुनिक काल का जो जगत है, वैज्ञानिक है, वह इसमें प्राणी को स्वीकार नहीं करता। परन्तु मैं इस विवाद में जाना नहीं चाहता हूँ। केवल वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि जहाँ पृथ्वी है, जहाँ वायु है वहाँ प्राणी निश्चित होता है। क्योंकि यह जो सार्वभौम सिद्धान्त है। उन चर्चाओं को तो मैं कल प्रकट करूंगा, मैं अधिक विवेचना इस सम्बन्ध में देना नहीं आया हूँ। यह तो वन है। जैसा भारद्वाज ने कहा है जैसा मुनिवरों! महर्षि दधीचि ने इसके ऊपर अनुसन्धान किया, उन विचारों को मैं कल प्रकट करूंगा। आज का विचार तो केवल यह है कि हम चन्द्रमा की उपासना करें। यह चन्द्रमा में ही सूर्य लोकों की प्रतिष्ठा रहती है। उस समय बेटा! ऋषि ने कहा, ब्रह्म व्यापक प्रवे।

चन्द्र मण्डलों की प्रतिष्ठा गन्धर्व लोकों में

ऋषि कन्या बोली, प्रभु! यह चन्द्र मण्डल किसमें प्रतिष्ठित रहते हैं? उन्होंने कहा कि यह जो चन्द्र मण्डल हैं यह इस महान गन्धर्व लोकों में ओत प्रोत रहते हैं। गन्धर्व लोक उसे कहा जाता है गन्धर्व एक आभा है, गन्धर्व एक लोक का नाम भी है। परन्तु यहाँ आभा का नाम गन्धर्व कहा गया है। जिस आभा में, जिस प्रतिभा में निरन्तर गति से यह लोक लोकान्तर गतिशील हो रहे हैं। गति कर रहे हैं, गतिमान हो रहे हैं। वह गन्धर्व ही नाना प्रकार के लोक लोकान्तर, उस गन्धर्व लोकों की आभा में बेटा! प्रतिष्ठित रहतें हैं। जैसे कहा है गन्धर्व मण्डल में ही, गन्धर्व तरंग में ही लोकों की गणना भी की जाती है। कहा जाता है कि यह मङ्गल है यह शनि है, यह सूर्य है, यह चन्द्र है, यह बृहस्पति है, यह आरूणि है, यह सप्त ऋषि मण्डल है अहा! यह वशिष्ठ है यह अरूण्धति है, यह सोमभानु है, सुरीचि है, श्रणकेतु है, जेठाय है, ध्रुव है, अंचग है, मचंग है, स्वाभकेतु है, त्रेणि है। आभ्याम है, स्वाति है, कृति है, मुनिवरों! पुष्पाय नक्षत्र है, जेठकेतु है, रूहानकेतु है। बेटा! यह नाना प्रकार के लोक लोकान्तर उस गन्धर्व आभा में बेटा! रमण कर रहे हैं।

मैं लोक लोकान्तरों की गणना करने नहीं आया हूँ। बेटा! विचार यह देने आया हूँ कि इस प्रभु के राष्ट्र में, इस प्रभु के जगत में तीन प्रकार के सौर मण्डल कहलाए जाते हैं। उन सौर मण्डल में प्रभु के राष्ट्र में एक सौर मण्डल का अधिपति सूर्य है, द्वितीय सौर मण्डल का अधिपति बृहस्पति है, तृतीय सौर मण्डल का अधिपति ध्रुव कहलाया गया है। और ऐसे ऐसे प्रभु के राष्ट्र में बेटा! अनन्त और मण्डल कहलाए जाते हैं। एक आकाश गंगा है, उस आकाश गंगा में नाना प्रकार के सौर मण्डल हैं, नाना ध्रुव हैं, नाना जेठाय हैं, नाना गन्धर्व हैं। अहा! देखो, उस प्रभु के राष्ट्र में सौर मण्डलों में अहा! आकाश गंगा में नाना सौर मण्डल हैं। यह तो प्रभु! का विज्ञान है, प्रभु का राष्ट्र है। इसको ऋषि मुनियों ने बेटा! नेति नेति उच्चारण किया है। क्यों कहा है। क्योंकि परमात्मा जिस प्रकार अनन्त है उसी प्रकार मुनिवरों! देखो, उसकी विज्ञान रचना भी अनन्त ही मानी जाती है।

मेरे प्यारे ऋषिवर! मैं इस सम्बध में अधिक विवेचना नहीं प्रकट करने आया हूँ। विचार विनिमय क्या कि यह चन्द्र लोकों की प्रतिष्ठा गन्धर्व लोकों में रहती है। बेटा! आज हमें गन्धर्व लोकों को जानना चाहिए। उस समय कन्या बोली, हे प्रभु! ये जो गन्धर्व लोक हैं इन की प्रतिष्ठा क्या है संसार में? उन्होंने कहा, देवी! इनकी तो प्रतिष्ठा है वह मानो इन्द्र लोक कहलाए जाते हैं। इन्द्र उसे कहते हैं जिसमें गन्धर्व आभा भी समाहित होती हो। जहाँ ऋत और सत का भी समन्वय हो करके वह इन्द्र लोकों में समाहित हो जाती है। उस आभा का नाम इन्द्र कहा गया है। आज हमें इन्द्र लोकों को जानना चाहिए। इन्द्र किसे कहते हैं? इन्द्र एक आभा है जिस आभा जिस आभा में संसार का सौर मण्डल और आकाश गंगा जिसके गर्भ में विचरण करती है। उसको इन्द्र कहा जाता है। इसी प्रकार आज हमें इन वाक्यों को विचारना चाहिए।

इन्द्र लोकों की प्रतिष्ठा प्रजापति में

उन्होंने कहा भगवान! मैं यह जानता चाहती हूँ कि यह इन्द्र लोकों की प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहा कि यह जो इन्द्र लोक की प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहा कि यह जो इन्द्र लोक है यह प्रजापति में प्रतिष्ठित हो जाते है? इसलिए प्रजापति को विचारना चाहिए। अहा! वह जो प्रजापति है वही संसार का प्रभुत्व है। आनन्दवत है, स्वानकेतु है। आज हमें उसे भान्ति अप्रतों से जान लेना चाहिए। वह जो प्रजापति है वह प्रजाओं का स्वामी है। इसलिए हमें इस प्रजापति को जानना चाहिए। हे मेरे देव! वह जो प्रजापति है जिसमें सर्वत्र जगत समाहित हो जाता है, सर्वत्र प्रजाएं समाहित रहती हैं। वह प्रजापति महा मङ्गलेश्वर

कहलाया गया है। सामभ्रम कहलाया गया है। मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हमें उसकी उपासना करनी चाहिए।

इतने में चाक्राणि ने कहा, भगवन! यह प्रजापति की प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहा, देवी, प्रजापति की जो प्रतिष्ठा है वह यज्ञ में मानी गई है। इसीलिए मैंने कल के वाक्यों में कहा था, इससे पूर्व शब्दों में भी कहा कि प्रत्येक गृह मे देवी यज्ञ होने चाहिएं। यज्ञ होने चाहिए, ज्योति समाप्त नहीं होनी चाहिए। प्रत्येक देव कन्या, प्रत्येक मुनिवरों! गृह आश्रम में पति पत्नी क्या, पुत्र पुत्रियां क्या, प्रत्येक मानव को यज्ञ करना चाहिए। यज्ञ का अभिप्राय है कि जितना भी शुभ कर्म है, शुभ आभा है उन सभी का नाम यज्ञ कहलाया गया है। वह यज्ञमय ज्योति है आनन्दवत है वह देवी यज्ञ कहलाया गया है। उसे यज्ञ कहते हैं। मेरे प्यारे ऋषिवर! यह जितना भी शुभ कर्म है वह सर्वत्र है। आज हमें यज्ञ करना चाहिए। वह मानव भी कुछ नहीं होता। जो यज्ञ से रहित रहता है। वह परमात्मा के राष्ट्र में न होने के तुल्य माना गया है।

यज्ञ की प्रतिष्ठा दक्षिणा में

मेरे प्यारे ऋषिवर! उस समय अहा! ऋषि कन्या बोली कि प्रभु! मैं यज्ञ की प्रतिष्ठा को जानना चाहती हूँ। उन्होंने कहा यज्ञ की जो प्रतिष्ठा है वह दक्षिणा है। आज हमें दक्षिणा देनी चाहिए। दक्षिणा क्या है? मैंने कल के वाक्यों में कहा, हुत और प्रहूत बेटा! हुत और प्रहूत का नाम यज्ञमय दक्षिणा है।

दक्षिणा नाम सङ्कल्प का है। यह जो सर्वत्र जगत है एक सङ्कल्प मात्र है। बेटा! पति पत्नी सङ्कल्प के नाते ही रहते हैं। ऋषि मुनियों ने कहा है, एक सङ्कल्प ही है जो संसार को स्थिर किए रहता है। परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में सङ्कल्प किया तो यह जगत स्थिर रहता है। जब प्रभु का सङ्कल्प पूर्ण हो जाता है। जो इस जगत का रूपान्तर हो जाता है। उसे प्रलय कहा जाता है। पति पत्नी का सङ्कल्प होता है, उस सङ्कल्प के कारण जीवन एक दूसरे का साथी बना रहता है। सङ्कल्प के कारण माता अपने पुत्र से स्नेह करती है। मुनिवरों! देखो, पुत्री अपने पिता से स्नेह करती है। आचार्य कुल में ब्रह्मचारी आचार्य दोनों का स्नेह चलता रहता है। बेटा! यह जितना परिवार है, कुटुम्ब है, यह सर्वत्र एक सङ्कल्प मात्र है। यह प्रभु की जो रचना है, प्रभु का जो विज्ञान है यह भी एक सङ्कल्प मात्र से ही है। बेटा! इसीलिए इसका नाम दक्षिणा कहलाया गया है। दक्षिणा मानव को प्रदान करनी चाहिए दक्षिणा होनी चाहिए। ऐसा कहते हैं कि बिना दक्षिणा के बिना सङ्कल्प के बिना कोई भी यज्ञ सम्पन्न नहीं होता।

सङ्कल्प की प्रतिष्ठा श्रद्धा संसार का स्तम्भ है।

मेरे प्यारे ऋषिवर! ऋषि कन्या बोली कि प्रभु! यह सङ्कल्प की प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहा कि सङ्कल्प की प्रतिष्ठा श्रद्धा है। इसीलिए मानव में श्रद्धा होनी चाहिए। श्रद्धा के स्तम्भ पर यह जगत स्थिर रहता है। यह सर्वत्र जो जगत है इसमें श्रद्धा से ही राष्ट्र होता है। राज्य और प्रजा में श्रद्धा होती है। मुनिवरों! देखो, राष्ट्र का जितना भी वाहक कार्य होता है, वह सब श्रद्धा के आधार पर ही स्थिर रहता है। इसलिए श्रद्धा होनी चाहिए। श्रद्धा ही पुत्र बनाता है, श्रद्धा ही पत्नी बनाता है, श्रद्धा ही माता बनाता है। यह श्रद्धा ही पुत्री की रचना करता है, कुटुम्ब और जगत की रचना कर देता है।

मेरे प्यारे ऋषिवर! मुनि महाराज से चाक्राणि बोली कि प्रभु! यह जो श्रद्धा है यह किसमें ओत प्रोत रहती है। उन्होंने कहा कि देवी! यह जो श्रद्धा है यह हृदय से उत्पन्न हुआ करती है। आज हमें इस हृदय को ऊँचा बनाना चाहिए। बेटा! यह जो हृदय है इसी से श्रद्धा है क्योंकि हृदय में ही योगीजन, तपस्वीजन, महर्षि बना करते हैं, हृदय में ही ध्यानावस्थित रहते हैं, हृदय में ही मन को स्थिर करते हैं, इस हृदय में ही यह सर्वत्र जगत को दृष्टिपात करते हैं। वे इस हृदय को ऊँचा बनाना चाहते हैं। यह हृदय ही है जो संसार का एक महान निर्माण कर्त्ता तथा निर्माणवेत्ता है। आज हमें बेटा! इस हृदय का मिलान परमात्मा के हृदय से करना चाहिए। जिससे यह आत्मा सदैव मोक्ष में भ्रमण करे।

मेरे प्यारे ऋषिवर! कहा गया है कि हृदय का मिलान प्रभु से १. हृदय से श्रद्धा २. श्रद्धा से दक्षिणा ३. दक्षिणा से यज्ञ ४. यज्ञ से प्रजापति ५. प्रजापति से इन्द्र ६. इन्द्र से गन्धर्व ७. गन्धर्व से चन्द्रमा ८. चन्द्रमा से सूर्य और ९. सूर्य से महत्वतव १०. महत्ततव से अन्तरिक्ष और ११. अन्तरिक्ष से वायु और १२. वायु से अग्नि १३. अग्नि से जल और १४. जल से पृथ्वी और १५ पृथ्वी से जगत की उत्पत्ति हो जाती है। यह सर्वत्र उस महाप्रकृति के जगत स्थिर रहता है। आज हमें इन स्तम्भों पर विचार विनिमय करना चाहिए। अनुसन्धानवेत्ता बनना चाहिए। क्योंकि सर्वत्र विज्ञान इसके गर्भ में रहता है। इन्हीं स्तम्भों में से विज्ञान की उत्पत्ति होती हैं।

आज मैं कोई अधिक चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। चाक्राणि ने यह कहा कि महाराज! यह हृदय किसमें प्रतिष्ठित रहता है। उस समय याज्ञवल्क्य ने कहा कि हे देवी! हे गार्गी! तुम अति प्रश्न न करो। अन्यथा तुम्हारा मस्तिष्क नीचे गिर जाएगा। मुनिवरों! देखो, यहाँ आ करके वह मौन हो गई। वाक्य क्या कि हमें प्रकृति के ये स्तम्भ हैं, इन्हें जानना चाहिए, इनके गर्भ में बेटा! विज्ञान है। मानवता है,

दर्शन है, यही बेटा! जगत का दिग्दर्शन कराता है। यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। कल मेरे प्यारे! महानन्द जी भी अपना कुछ संक्षिप्त परिचय देंगे। अपना विचार प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पाठ होगा।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो.... ....। (प्रवचन सन्दर्भ 19-03-1972)

देवी-यज्ञ का स्वरूप 72.03.20

उस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा की आभा का सदैव दिग्दर्शन होता रहता है। आओ आज हम अपने प्यारे प्रभु की महिमा का गुणगान गाते चलें, जो संसार का पालन पोषण करने वाला है, चैतन्य है, सर्वज्ञ है, प्रकृति के कण-कण में व्याप रहा है। यह उसका ही जगत् है ज्ञान और विज्ञान में जो दृष्टिपात आ रहा है। यह संसार एक प्रकार की विज्ञानशाला है। जो मानव विज्ञानवेत्ता बनना चाहता है वह वैज्ञानिक प्रतिभा में रमण करने लगे तो वह विज्ञान के गर्भ में पहुंच जाता है। उसकी उसमें प्रतीति होने लगती है। तो आज पुनः से उस मनोहर देव जो विज्ञानमय माना गया है उस प्रभु की हम महिमा को द्वितीय रूप में, तृतीय रूपों में उसका दिग्दर्शन चाहते हैं क्योंकि प्रत्येक मानव प्रत्येक देव कन्या की एक आकांक्षा रहती है कि मैं उस आनन्द और विज्ञान में जाना चाहता हूँ। जिस विज्ञान में जाने के पश्चात्, मानव की प्रवृत्तियाँ उनमें संलग्न हो करके परलोक को प्राप्त हो जाती हैं। वह किसी भी प्रकार का वैज्ञानिक हो अथवा ज्ञानमय हो।

हमारे यहाँ लोक-लोकान्तरों की विवेचना परम्परागतों से ही, वैदिक साहित्य में उसका निरूपण किया गया है । मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी ने, बहुत पूर्व काल में कहा था कि हम विज्ञानवेत्ता बनना चाहते हैं,राष्ट्रीय बनना चाहते हैं। परन्तु विचारने का विषय केवल एक ही रह जाता है कि आज हम विज्ञानमय बनना चाहते हैं या राष्ट्रीय बनना चाहते हैं, संसार में राष्ट्रीय वह मानव होता है जो कर्म, वचन से, उस राष्ट्रीय आभा को जानता हुआ और उसके लिए आहुति देता है। वह राष्ट्रीय जीवन है, जिसमें मानव अपराध नहीं करता। वह अपनी दृढ़ता को लेकर के साहस और मानवीय मर्यादा के आधार पर अपने जीवन को उल्लास में ले जाता है। एक वह मानव है, जो अपने को राष्ट्रीयता में नहीं, केवल मानवीय क्षेत्र में ऊँचा बनाना चाहता है। मानवीय क्षेत्र में ऊँचा कौन होता है? जो अपने राष्ट्र को पतित नही होने देता, अपनी प्रजा को पतित नहीं होने देता, वह मानवीयता का दिग्दर्शन करता है।

जब मैं अपनी माताओं के द्वार पर जाता हूँ, तो विचार यह आता है कि संसार में माता कौन है? वह भी एक माता थी, जिनके गर्भ से भगवान राम का जन्म हुआ। वह भी माता थी जिनके गर्भ से वशिष्ठ जैसे महापुरुषों का जन्म हुआ। एक नहीं और भी नाना ऋषि मुनियों को जन्म देने वाली पवित्र माताएं हुई हैं। वह माता ऐसी हैं, जिन माताओं के द्वारा मानवीयता, राष्ट्रीयता दोनों ही उनके समीप होती हैं। जो माता अपने गर्भाशय को ऊँचा बनाना जानती हैं उसकी आभा को जानती हैं वह राष्ट्रीयता का स्वार्थ

उनके द्वार पर होता है, परन्तु जो मानवीयता पर विश्वासी होती हैं वह मेरी पवित्र माता मानवीयता की अमूल्य शिक्षा महानता संकल्प धारण करके मानो वह माता और भी सौभाग्यशाली बन जाती है। संसार में, वह माता कितनी उज्ज्वल है, जिस माता के गर्भस्थल से ऐसे बालक का ऐसी पुत्री का जन्म हो जो अपनी राष्ट्रीयता और मानवीयता दोनों को लेकर के परलोक को प्राप्त हो जाती है।

आज मैं केवल उसी महामना देवी की याचना नहीं करना चाहता हूँ। कौन-सी महामना? जो मेरे जैसे बालक को संसार में जन्म देती है। हे मेरी माँ! तू कितनी पवित्र है।, जो कणाद और गौतम ऋषि को जन्म देने वाली माता है,वह माता कितनी सौभाग्यशाली है। आज हमें जो चैतन्य जो माता हैं उसकी उपासना करनी चाहिए। वेद का ऋषि कहता है कि जिस गृह में माता का अपमान होता है, पुत्र माता का निरादर करता है वह गृह नहीं रहता, वह शमशान भूमि बन जाता है।

पुरोहित प्रथा

मेरे प्यारे महानन्द जी ने कई काल में प्रगट कराते हुए कहा हैं आज भी यह अपना सूक्ष्म सा विचार देने वाले हैं। समय मिलेगा तो, परन्तु केवल हम इतना विचार देना चाहते हैं कि हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, एक हमारे यहाँ पुरोहित प्रथा थी। वह जो पुरोहित प्रथा है प्रत्येक गृह आश्रम में पुरोहित रहता था। उस पुरोहित का अभिप्रायः यह है कि वह पराविद्या में प्रविष्ट करा दे। और गृह को धर्मज्ञ और मानवीयता के क्षेत्र में लाने का प्रयास करे। परन्तु वह जो पुरोहित प्रथा है वह बहुत ही परम्परा से, आज से नहीं हमारे यहाँ राष्ट्र गृहों में भी यह प्रथा रही थी। भगवान मनु के काल में जैसे भगवान मनु जी हुए,सबसे प्रथम मनु,स्वायम्भुव मनु थे और स्वायम्भुव मनु के यहाँ राज पुरोहित प्रथा थी। उसके पश्चात्, इक्ष्वाकु मनु हुए, इक्ष्वाकु मनु के यहाँ भी यही कर्म रहा। उसके पश्चात् उनके पुत्र का नाम सूर्य मनु था, सूर्य मनु परम्परा में भी इसी प्रकार की विचारधारा रही। इसके पश्चात् सूर्य मनु के पुत्र का नाम चन्द्र मनु था, चन्द्रकेतु मनु के पुत्र का नाम रोहिणी मनु था, रोहिणी मनु के पुत्र का नाम स्वानकेतु मनु था, स्वानकेतु मनु के पुत्र का नाम श्रुति मनु था, और श्रुति मनु के पुत्र का नाम मानकेतु मनु था, और मानकेतु के पुत्र का नाम ज्ञानश्रुति मनु था, और ज्ञानश्रुति मनु के पुत्र का नाम सोमभानु मनु था, मैं मनु परम्परा का वर्णन करने नहीं जा रहा हूँ। विचार यह कि साढ़े सात हजार वंशलज हुए भगवान मनु परम्परा में उनकी परम्पराएं सदैव संसार में उज्ज्वलता का प्राप्त रहीं। उनका वंशलज विचारणीय था, विचार के योग्य था, जिनमें धर्म और मानवीयता और मर्यादा को ले करके, उनकी राष्ट्रीयता का प्रादुर्भाव होता, परन्तु जब इनमें दोनों वस्तुएं नहीं रहती,तो वे परिवार, वे वंशलज संसार से समाप्त हो जाते हैं।

तो हम मानवता चाहते हैं और मानवता उस काल में आती है,जब वैदिकता मनुष्य के द्वार पर होती है। वैदिक धारा को अपनाना और वैदिक धारा को लेकर के जब मानव इस संसार में विचरण करता है,तो उस समय उसकी विचारधारा एक महान उज्ज्वल रहती है।

तो वह माँ कौन-सी माता है? जिसको वसुन्धरा कहते हैं,जिसको हमारे यहाँ गौ कहा गया है, जिसको हमारे यहाँ प्रकृति कहा गया है जिसके अणु, महाअणु त्रसरेणुओं को जानने के पश्चात् व्यापक मस्तिष्क बन करके और विज्ञान में जाना जिसके लिए स्वभाव हो जाता है। विज्ञान में जाना कोई अपराध नहीं। परन्तु विज्ञान में मानवता को नष्ट कर देना यह अपराध है। परन्तु अपनी मानवीयता को नष्ट नहीं करना चाहिए। आज जो अपनी मानवीयता को नष्ट कर देता है वह संसार में क्या बनता है?

हमारे यहाँ नाना प्रकार की विवेचना, नाना प्रकार के यज्ञों को रचाया। वह अग्नि सप्त जिह्वा वाली है। उस में देवीयज्ञ में से ऐसी धातुओं का जन्म होता था। अग्नि में जब स्वाहा देते, स्वाहा के साथ में जब परमाणु उत्पन्न होते,उन परमाणुओं को यन्त्रों द्वारा एकत्रित किया जाता। एकत्रित करने के पश्चात् उन परमाणुओं का आपस में मिलान करके उनसे यन्त्रों का निर्माण होता था। उन यन्त्रों का निर्माण केवल उस की प्राप्ति यज्ञशाला के द्वारा ही होती है। हमारे यहं ऋषि मुनियों ने भिन्न-भिन्न प्रकार की विवेचनाएँ प्रारम्भ की। भिन्न-भिन्न प्रकार का जीवन मानव के लिए संचार किया। राष्ट्र के लिए क्या और विज्ञानवेत्ताओं के लिए क्या,ऋषि-मुनि अपने यहाँ सुन्दर-सुन्दर विज्ञानशालाएं, यज्ञ शालाएं उनमें भिन्न-भिन्न प्रकार के याग होते थे।

हमारे यहाँ देवी की पूजा का अभिप्रायः है। मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी प्रेरणा दे रहे हैं आज उनको समय तो प्रदान नहीं किया जाएगा। परन्तु आज यह प्रेरणा है कि देवी पूजा है क्या? यह प्रश्न है बहुत ही परम्परा का प्रश्न है परन्तु यह कहा है कि देवी पूजा का अभिप्रायः है संसार में वैज्ञानिक बनना, वह देवी याग की पूजा है। देवी का अभिप्रायः यह है कि माता की पूजा करनी है? कौन-सी माता की पूजा करनी है जो जननी है, जो जन्म देने वाली है। आज उस माता का हम आदर करना चाहते हैं, उस माता के श्रृंगार को हम हनन नहीं कर सकते। आज जो संसार में माता के श्रृंगार को भ्रष्ट करना चाहता है वह देवी याग नहीं कर सकता, वह देवी पूजा नहीं कर सकता। जो संसार में अपनी रसना के ऊपर निर्भर हो जाता है जो नाना प्रकार के दूसरों के गर्भ का भक्षण करना प्रारम्भ कर देता है, दूसरे प्राणी के माँस को भक्षण करना चाहता है वह भी देवी याग का अधिकारी नहीं होता संसार में,ऐसा मैंने बहुत पूर्व काल में विवेचना दी है क्या उसका जो सत्य विचार है विचार केवल यह कि देवी याग की हमें पूजा

करनी है, आज हमें देवी के द्वार पर जाना है। देवी कहते किसे हैं? जो हमें देती है। और वह देती क्या है! हमें करूणा देती है, ममता देती है, मान देती है, अपनी लोरियों का दुग्ध पान करा देती है, उसे माता कहते हैं। माता उसे नहीं कहते जो दूसरो का हनन करने वाली हो

समय-समय पर मैं अपने महानन्द जी के प्रश्नों का उत्तर देता ही रहता हूँ विचार क्या, कि हमें वैज्ञानिक बनना है और विज्ञान के क्षेत्र में जाना है। जिस राष्ट्र में, जिस समाज में वैज्ञानिक तथ्य होते हैं, वह राष्ट्र और समाज उत्तम होता है। परन्तु विज्ञान के साथ में मानवता का हनन नहीं होना चाहिए। यदि विज्ञान के साथ में मानवता का हनन हो जाएगा,तो विज्ञान अथवा वह ममतामयी माँ की पूजा नहीं रहेगी। इसीलिए आज हम मानवीयता के क्षेत्र में जाने का प्रयास करें। मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी पुनः प्रेरणा दे रहें हैं कि मुझे समय प्रदान किया जाए। परन्तु मैं इन्हे कुछ समय प्रदान करने वाला था परन्तु कल इन्हे समय प्रदान किया जा सकेगा। विचार क्या,कि आज हम उस मानवीय क्षेत्र में ऊर्ध्वा गति को प्राप्त करना चाहते हैं, आज संसार में अपने सद्भाव, सद उज्ज्वलता माता तो उसे ही प्रीति करती है जो उसके अनुकूल कर्म करता है। संसार आज वेद के अनुकूल वैदिक विचार उसके द्वारा नहीं होता वह अपनी महानता में उज्ज्वल नहीं होता। माँ उसे प्रीति नहीं करती। एक माता के गर्भ से बालक का जन्म होता है परन्तु वह माता उसके द्वारा चार पुत्र हैं। परन्तु उसका उसी पुत्र से अति आत्मिक स्नेह होता है जो माता की आज्ञा का पालन करता है। परन्तु जो आज्ञा का पालन नहीं करता बाद में वह माता उसे अपने हृदय से उतना आदर नहीं कर पाती। इसी प्रकार वह जो परम पिता परमात्मा है, जो आनन्दमयी मेरी माँ है उस प्रभु को माता कहा है। क्योंकि वह संसार का पालन पोषण करने वाला है। उस माता को हमारे यहाँ दुर्गेवेति कहा है। जो दुर्गुणों को हनन करने वाला है, दुर्गुणों को अपने में ग्रहण करता है, वह ग्रहण नहीं करता। उसकी प्रतिभा के आश्रित होने पर व्यक्ति के दुर्गुण हो जाते हैं। पवित्र हो कर के जब प्रभु के द्वार पर जाते हैं तो प्रभु उस मानव को मोक्ष प्रदान कर देता है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हम अपनी उस आभा को जानना चाहते हैं जिस आभा के द्वारा आज हम उस जीवन को एक महान् ऊर्ध्वा गति को ले जाना चाहते हैं। अब मैं अपने विचारों को अधिक प्रोत्साहन नहीं दूंगा। विचार केवल यह है कि आज का विचार हमारा क्या है कि हम उस मनोहर ऋषि मुनियों के क्षेत्र में जाने का प्रयास करें। जहाँ देवी यज्ञ किए जाते हैं। और देवी यज्ञ के साथ-साथ नाना प्रकार के परमाणुओं को नाना अणुओं को लेकर के उनका मिलान करके उनसे यन्त्रों का निर्माण होता है और वह यन्त्र, उन परमाणुओं से उन यन्त्रों का निर्माण होता हुआ वह वायु मण्डल में प्रसारित हो जाता है।

वायु मण्डल में उनकी आभा का दिग्दर्शन होता है। तो इसीलिए हम उस ममतामयी आनन्दधारा को जानना चाहते हैं। जो अव्याह्यत गति से रमण करने वाली है। तो मेरे प्यारे ऋषिवर! अब मैं अपने विचार अधिक नहीं प्रगट करूंगा, अब मैं संक्षिप्त परिचय अपने प्यारे पुत्रवत को देना चाहता हूँ।

पूज्य महानन्द जीः- ओ३म् यमाः रूद्रा भा गा ये शरणं गता मानं भागा। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! भद्र ऋषि मण्डल! मेरे भद्र समाज! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने आज अपना अमूल्य समय प्रदान किया। जिस समय की प्रतीक्षा मैं सदैव करता रहता हूँ मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कुछ विज्ञान की चर्चाएँ प्रगट कर रहे थे। कुछ नाना प्रकार के यागों के सम्बन्ध में अपना विचार प्रगट कर रहे थे,उन विचारों में कोई द्वितीय भाव नहीं था। परन्तु आज मैं उन आभाओं का विवरण करने आया हूँ। जिन पद्धतियों में इतनी दूरिता, दुर्व्यसन आ गए, जिनमें धर्म की परम्परा, धर्म की महिमा को हम एक उज्ज्वल स्थान न दे करके हमारी धृष्टता बन गई। आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी उस देवी याग के सम्बन्ध में अपना प्रकाश दे रहे थे। महर्षि भारद्वाज मुनि की चर्चाएँ कर रहे थे। परन्तु वे चर्चाएँ केवल गुरुओं के शब्दों में ही शेष रह गई हैं। मैं केवल यह उच्चारण करना चाहता हूँ मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह कहा है कि देवी की पूजा का अधिकारी कौन है? और देवी कहते किसे हैं? आज मैं उन देवियों का वर्णन करने चला जाँऊ, जिन देवियों के गर्भ से हम जैसे प्यारे पुत्रों का जन्म होता है। आज वे देवियां, आधुनिक काल का जो जगत् है उनके द्वारा न तो वाणी का श्रृंगार है न चरित्र का श्रृंगार है। केवल शारीरिक श्रृंगार उन्नत होता चला जा रहा है। आज मैं जब उन क्षेत्रों में जाता हूँ तो यह विचार आता है। कि देवी याग की वार्त्ता तो बहुत दूरी है परन्तु आज तो मानव ने अपना मार्ग ही द्वितीय अपनाया है। जिस मार्ग में मानवता की विवेचना करना व्यर्थ हो जाता है। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से बहुत पूर्व काल में कहा कि महाभारत काल के पश्चात् यहाँ जब नाना प्रकार की रूढ़ियाँ आने लगीं, उन रूढ़ियों में देवी याग का प्रथम स्थान रहा। परन्तु देवी याग का अभिप्रायः क्या रहा है? आज मैं उसको कुछ सूक्ष्म रूप में प्रगट कराए देता हूँ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव को तो उसकी जानकारी नहीं।

परन्तु देवी याग में गौ माँस और भी नाना प्रकार के माँसों का प्रतिपादन उसमें यज्ञ में परिणत किया जाता था। उसके पश्चात् जो मदिरा होता है उसका भी सुरापान किया जाता था, आज भी हिमालय पर्वतों के आँगन में वह प्रायः कर्म होता है। वर्तमान में भी कर्म होता है परन्तु मैं यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ। कि देवी याग में मानव को देवी पूजन तो करना चाहिए। परन्तु देवी पूजन के साथ में मानव को अपने आचरण, अपनी मानवीयता, अपने आहार, अपने व्यवहार को सुन्दर बना लेना अनिवार्य

होता है। परन्तु यदि वह न होता है,तो वह जो देवी है जिसे हम प्रकृति कहते है, जिसे हम प्रभु के रूपों में परिणत कर देते हैं,वह मानव के सुकृत को अपने में हनन कर लेती है, अपने में ले जाती है। इसीलिए आज हमें यह विचारना है महाभारत काल के पश्चात् यहाँ वाममार्ग एक सम्प्रदाय हुआ है उन्होंने देवी की पूजा करना, पार्वती की पूजा करना, दुर्गे की पूजा करना, काली की पूजा करना और भी नाना प्रकार की पूजा करना। उस पूजा का अभिप्रायः क्या किया? क्या उसमें माँस वह अग्नि में तपाया जाता है उस अग्नि का प्रसाद बनाया जाता। वह जो अग्नि का प्रसाद है क्या वही देवी पूजा है तो वह देवी पूजा कदापि नहीं हो सकती। उसको देवी पूजा उच्चारण ही करना व्यर्थ है। परन्तु देवी तो देती है। क्या देती है? सुमति देती है सुविचार देती है, सुभावना देती है। यदि इसी का नाम देवी याग है। तो यह देवीयाग नहीं हो सकता। और न उसको देवी पूजन कहा जाता है। मैं उच्चारण करने के लिए सदैव तत्पर रहता हूँ बहुत ही परम्परागतों से ही, मैंने अपने विचार अपने पूज्यपाद गुरुदेव को प्रगट कराए, देवी जब पूजन होता है वाममार्ग सम्प्रदाय में तो उसमें आचार्य क्या वेदं ब्रह्मा वेदों का अपमान करने वाला जो सम्प्रदाय होता है, वेदों का जो अपमान करने वाला जो विचार होता है वह कदापि भी मानव के लिए, मर्यादा के लिए सुख कदापि नहीं हुआ करता है। मैने बहुत पूर्व काल में इन वाक्यों को हमारे यहाँ देवी याग परम्परागतों में होता था। द्वापर काल में, त्रेता काल में, सतयुग काल में देवी का पूजन होता रहा है। परन्तु देवी के पूजन का अभिप्रायः यह है क्या देवी के पूजन में नाना प्रकार की सुगन्धिदायक औषधियों का एकत्रित किया जाता है। शुद्ध भावना वाला यज्ञमान, शुद्ध भावना वाले ऋत्विज, वेद पाठी ब्राह्मण उनके द्वारा यज्ञ होता है, उनके द्वारा स्वाहा होता है वही तो देवी की पूजा है। देवी की पूजा का अभिप्रायः यह है इसको देव पूजा कहा जाता है देव पूजा का अभिप्रायः यह कि जो देवता हमें देते हैं,आज हम उन्हें कुछ दे,परन्तु वे सुगन्धि दें,उनको अन्न दें, वह अन्न क्या है? वह जो सुगन्धि है वही उनका अन्न कहलाया गया है। उसको हमारे यहाँ देवी पूजन कहा जाता है। क्योंकि देवी नाम अग्नि का है, देवी नाम वायु का है, देवी नाम है उस माता का,जिसके गर्भ में हम पनपा करते हैं। परन्तु आज मानव माता का आदर करता हुआ अपने में ऐसा अनुभव करता है कि मैं यह क्या कर रहा हूँ। वह उसको देवी पूजा नहीं, उसको क्या कहा जाएगा? इसको संसार ही जानता है।

इसीलिए आज मैं इन माताओं के लिए मैं आज आदर की दृष्टि से अपना वाक्य प्रगट करता हूँ कि वे माताएं कितनी सौभाग्यशालिनी हैं जो माता अपने आचरण, अपने आभूषण को अपनाती हैं। आभूषण

का अभिप्रायः है विद्या, आभूषण का अभिप्रायः है उनका सदाचार, उनकी मानवीयता है। जब माताओं के द्वारा यह होती है तब उन माताओं का पूजन होना चाहिए संसार में, जब माताओं के गर्भ से ऊँचे-ऊँचे महान् ऋषियों का जन्म होता है संसार में, मर्यादा ज्यों की त्यों बनी रहे। उस मर्यादा का विनाश न हो जाए। यह मर्यादा भगवान् राम, कृष्ण और भी आदि महापुरुषों की मर्यादा सदैव स्थित रहे इस जगत् में। इसीलिए मैं आज पुनः से इस वाक् को प्रगट कर रहा हूँ। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय दे रहा हूँ कि आज का जो समाज है वह देवी पूजा से बहुत दूरी है। बहुत ही दूरी है। क्योंकि देवी का अभिप्रायः है अपने दैविक विचारों को बनाना वही देवी की पूजा है।

आज जो विचारों को कहीं का कहीं ले जाता है आज नाना प्रकार के प्राणियों का भक्षण करने वाला प्राणी आज का मानव यह उच्चारण करता है कि माँस चाहिए, रसना का स्वादन चाहिए। क्या वह देवी याग कर सकता है? देवी की पूजा करने का उसे क्या अधिकार रह जाता है संसार में? संसार में वह मानव ऊँचा होता है जो मानव अपनी वाणी से, मन, कर्म, वचन से यथार्थ रहता है इस मसाज में। यह वाममार्गी जो प्रथा है वह समाज से शनै-शनै दूरी तो हो रही हैं,इसमें कोई सन्देह नहीं है। परन्तु वह दूरी होनी चाहिए। वह वास्तव में यज्ञमयी ज्योति जैसे यज्ञ की ज्योति की ऊर्ध्वा गति होती है इसी प्रकार मानव के विचारों की भी ऊर्ध्वागति होनी चाहिए। उसी काल में यह समाज ऊँचा बनेगा, पवित्र बनेगा। देवी सम्पदावादी जो प्राणी हैं वह दैविकवादी बन कर के अपने जीवन को उन्नत बना सकेंगे। परन्तु

संसार में ज्ञान न रहा। ज्ञान का अधूरा पन आ जाने के कारण संसार में रूढ़ि बनती हैं। और वह रूढ़ि विनाश का कारण बनती है। और वही रूढ़ि जिससे रूढ़ि बना करती हैं उसी पर वे घातक बन कर के इसके जीवन को नष्ट करने वाली बन जाती हैं। मुझे स्मरण रहता है जब राष्ट्रवाद में नाना प्रकार की रूढ़ियाँ होती हैं। वह रूढ़ि एक सम्प्रदाय से रूढ़ि का निकास हुआ है। परन्तु कोई समय आता है जब वह उनकी इच्छाएँ पूर्ण नही होती, वही रूढ़ि जहाँ से उत्पन्न हुई उसी रूढ़ि को निगलने वाली बन जाती हैं। उससे राष्ट्र और समाज दोनों का विनाश होता जाता है। तो आज हम देवी की पूजा करने वाले बनें। परन्तु इसका नाम देवी पूजा नहीं है देवी पूजा का अभिप्रायः है, अपने आचरणों को पवित्र बनाया जाए। और यज्ञ किया जाए।

परम्परा की जो प्रथा है कि सतोयुग के काल से चैत्र मास में प्रतिपदा से लेकर के सप्तमी तक अष्टमी तक यज्ञ प्रारम्भ रहता है। देखो, यहाँ वेदों के नाना पठन-पाठन होते और क्रम चलता और यज्ञशाला

में राष्ट्र का राष्ट्र ध्वनिमय हो जाता। मुझे स्मरण है जब भगवान राम के काल का वह समय मुझे स्मरण है जब भगवान राम लंका को विजय करके आए तो उन्होंने देवी याग किया। याग क्या किया उनके यहाँ एक वर्ष में दो समय देवी की पूजा करना क्या इन दोनों समय ऐसे हैं एक समय पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना की जाती है। एक याग में कृषि के गर्भ से वह नाना प्रकार की वनस्पतियों का अन्न उत्पन्न हो करके कृषक गृह में आता है। तो उस समय प्रत्येक गृह में याग होने चाहिएं। प्रत्येक गृह में याग होते हैं तो वह प्रकृति माता की पूजा है, देवी की पूजा है परन्तु वही तो अखण्ड ज्योति है हमारे यहाँ। भगवान् राम का जीवन मुझे स्मरण है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहा करते हैं,कि उन्होंने जब से राष्ट्र स्थापित किया और मृत्यु तक उनके गृह से यज्ञमयी ज्योति का विनाश नहीं हुआ, वह यज्ञ ज्योति, यज्ञ की अग्नि उनकी यज्ञशाला में सदैव प्रदीप्त रहती थी,यज्ञ होते रहते थे। तो राष्ट्र और समाज उस काल में ऊँचा बना करता है। उनका सम्बन्ध राष्ट्र के और समाज के ऊपर बहुत ही गम्भीरता से अपना प्रभुत्व निर्धारित करता है,इसीलिए मैं इन विचारों को इसीलिए देने आया हूँ कि याग होने चाहिए यज्ञ होने चाहिए,जितने हो जाएंगे उतना ही राष्ट्र और वायुमण्डल ऊँचा बन जाएगा |मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इस देवी याग के सम्बन्ध में देवी की विवेचना देते हुए यह नाना विचार देते रहते हैं इनके विचार बहुत गम्भीर रहते हैं मेरा विचार तो इतना गम्भीर नहीं,परन्तु जहाँ यज्ञों में माँसों की स्थापना की जाती है अरे, यज्ञ तो दूसरों की रक्षा करने के लिए होते हैं,यज्ञ दूसरो को नष्ट करने नहीं आते संसार में, इसीलिए देवी जो पालना करती है,देवी किसी का भक्षण नहीं करती संसार में,अहा देवी उस काल में भक्षण करती है जब उसके पतितव पर कोई आक्रमण करता है उसमें वह देवी चण्डी बन जाती है,वह देवी रूद्र का रूप धारण कर लेती है,माँ काली बन करके उस मानव को नष्ट कर देती है,इसीलिए आज हम उस महामना देवी की याचना करने वाले बनें, वह देवी क्या है? वह माता है जिसके गर्भ से मानव का जन्म होता है जिस गृह में माता का निरादर किया जाता है वह गृह आज नहीं तो कल नष्ट हो जाएगा, जिस राष्ट्र में इस प्रकार की भावना है वह राष्ट्र नष्ट हो जाते है। इसी प्रकार आज हम उस महामना देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम उस अशुद्धवाद को त्याग करके कुरीतियों को त्याग करके सत् भावना को लाने का प्रयास करें,हम अपने जीवन में याग करने वाले बनें,मैं अधिक विवेचना देने नही आया हूँ विचार केवल मेरा यही है क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो आधुनिक काल को जानते नहीं परन्तु विचार यह है कि माताओं का श्रृंगार सुरक्षित रहे, माताओं की पूजा होती रहे, उसका श्रृंगार उसकी सुरक्षा है इसी प्रकार माता अपने श्रृंगार में इतनी ललाहित न हो जाए,जिससे वह अपनेपन को त्याग करके वह

किसी और ही मार्ग को अपना लें, यह राष्ट्र और समाज का अपमान होता है उसमें धर्म और मानवीयता का ह्रास होता है,

तो आज का समाज, मैं राष्ट्रवाद में जाना नहीं चाहता हूँ मैं विज्ञानवाद में भी जाना नहीं चाहता हूँ क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव की आज्ञा नही है,उच्चारण केवल यही है कि याग करो परन्तु देवी की पूजा करना,मानव को चाहिए परन्तु वह देवी की ही पूजा हो,वह ऐसी पूजा न हो, उदर की पूजा न हो जाए,जिससे उदर की पूजा हो करके संसार का विनाश हो जाए,परन्तु देवी की पूजा क्या है देवी की पूजा करना मानवीयता, चरित्र और महानता को लाना देवी की पूजा है, यही हम आज देवी उसी को कहते है जो चरित्रवान पुत्री होती है उसको प्रायः मानव कहता है यह तो बड़ी विवेचना यह तो बड़ी महान देवी है बड़ा आत्म बल है तो प्रायः देवी कहते है परन्तु जो दुराचारिनी हो तो कहते हैं यह देवी नहीं यह तो महा अपराधिनी है, निरादर होना चाहिए इसका। उसका समाज में अपमान होता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव सर्वत्र जानते हैं मैं इनके समक्ष विवेचना देना मेरे लिए जैसे सूर्य को एक सूक्ष्म से जुगनू के तुल्य, मैं अपना प्रकाश देना प्रारम्भ कंरू। यह मेरे लिए शोभनीय नहीं है। विचार देना केवल आज हमारा यह, कि क्या आज हम देवी याग करने वाले बनें। महर्षि भारद्वाज की भांति, राम और कृष्ण की भांति यहाँ परम्परा से याग होते रहे हैं। परन्तु उस प्रभु का पूजन होता रहा है। यहाँ कोई ऐसा आश्चर्य नहीं है। प्रत्येक ऋषि-मुनि देवी याग, देवी नाम श्रद्धा का है उस श्रद्धा को लाना चाहिए। श्रद्धा रूपी देवी जब जागरूक हो जाती है तो मानव का हृदय पवित्र बन जाता है। आज हम अपनेपन में ऊँचे बनते हुए, उस महामना माता को अपनाते हुए संसार में निरादर करने वाले न बने। उस वाममार्ग प्रथा को त्याग करके वैदिक प्रथा को लाने का प्रयास किया जाए। याग किए जाएं, सुन्दर-सुन्दर याग होंगे, तो संसार पूजन करेगा,संसार में सुगन्धि होगी,यह देव पूजा है, महान पूजा है,प्रकृति की पूजा है, जिससे संसार ऊँचा बनता है।

तो मेरे प्यारे महानन्द जी ने रूढ़िवाद के सम्बन्ध में अपना विचार दिया तो इनका विचार मुझे तो बहुत प्रिय लगा है क्योंकि देवी की ही पूजा होनी चाहिए, श्रद्धा को उत्पन्न करते हुए, महामना माता की अपना आहार व्यवहार पवित्र बनाते हुए निष्ठा, मानवता, साहस को अपनाते हुए रूढ़ियों का विनाश, सदाचार, देवी की पूजा, देवी क्या है यह मरे प्यारे महानन्द जी ने भली भांति प्रगट किया उन्होंने देवी श्रद्धा को कहा है, इन्होंने देवी वसुन्धरा को कहा है, प्रकृति को कहा है, देवी उस माता को कहा है जो चरित्रवान है मानवता जिसके द्वारा है। जो अपने गर्भ से राम, कृष्ण और भी महापुरुषों को जन्म देने वाली माता

है, वह देवी है। उनका गर्भाशय सदैव उज्ज्वल रहता है। तो हमें देवीयाग करने चाहिए। परन्तु उनके साथ यौगिकवाद होना चाहिए। मानववाद होना चाहिए। वह केवल शब्दों में न रह जाएं, वह अपने आचरण में आने चाहिए। सेंट्रल पार्क, लोधी रोड समय रात्रि ६.०० बजे दुर्गा डिवोटीज ऐसो० द्वारा (प्रवचन सन्दर्भ 20-03-1972)